इकाई–I

भारत का संविधान

1. भारत के संविधान की विशेषताएं

(Salient Features of Indian Constitution)

''मैं अनुभव करता हूँ कि भारतीय संविधान कार्य संचालन योग्य है, लचीला है तथा इसमें शान्तिकाल व युद्धकाल में देश की एकता बनाये रखने का सामर्थ्य है।''

डॉ. अम्बेडकर

किसी भी देश के संविधान व राजनीतिक व्यवस्था में उस देश की आस्थाओं, विश्वासों, आधारभूत शाश्वत मूल्यों और सिद्वांतों के समेकित दर्शन होते हैं। भारत के संविधान निर्माताओं ने हमारे देश की एतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में रख कर संविधान का निर्माण किया है। उनका लक्ष्य एक लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना करना था, इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए उन्होंने संविधान की प्रस्तावना में संविधान के आदर्शों को स्पष्ट किया है। हमारे संविधान की अपनी विशिष्टतायें हैं जो उसे विश्व के अन्य संविधानों से अलग करती हैं। यह संविधान निर्माताओं की बुद्धिमत्ता व दूरदृष्टि का प्रमाण है कि उन्होंने विश्व के महत्त्वपूर्ण संविधानों के श्रेष्ठ गुणों का संविधान में समावेश किया है, उन्होंने भारतीय परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार उनमें वांछित परिवर्तन किये जाने का विकल्प रखा है। इसीलिए इसे जीवंत संविधान का दर्जा दिया गया है। यह हमारे देश का सर्वोच्च कानून है जो शासकीय तंत्र को सक्रिय रूप से काम करने व व्यवस्था संचालित करने हेतु दिशा निर्देशित करता है।

हमारा संविधान एक तरफ मौलिक राजनीतिक सिद्धान्तों को परिभाषित करता है वहीं दूसरी तरफ विभिन्न संरचनाओं और प्रक्रियाओं को भी स्थापित करता है। इस प्रकिया में मौलिक अधिकार, नीति निर्देशक सिद्धान्त व नागरिकों के मूल कर्त्तव्य भी शामिल हैं। यह दुनिया का ऐसा लिखित कानूनी दस्तावेज है जिसे लिखने में सर्वाधिक समय, 2 वर्ष 11 माह, 18 दिन लगे। इसे एक संविधान सभा ने तैयार किया। संविधान के मूल वैचारिक आधार की अभिव्यक्ति को अत्यन्त संक्षिप्त रूप में 'प्रस्तावना' शीर्षक में व्यक्त किया गया है जिसमें किसी भी परिस्थिति में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। हमारे संविधान में उन आदर्शों को सम्मिलित किया गया है जो संविधान की लोकतंत्र के प्रति प्रतिबद्धता, सभी लोगों की स्वतंत्रता समानता व न्याय को सुनिश्चित करता है। भारतीय संविधान की विशेषताएँ मूलतः इसकी प्रस्तावना में व्याख्यायित सिद्धान्तों व आदर्शों का विस्तार ही है।

1.1 भारतीय संविधान की विशेषताएँ (Salient Features of Indian Constitution) –

1. **सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संविधान (Sovereign Constitution)** – भारत का संविधान लोकप्रिय प्रभुसत्ता पर आधारित संविधान है अर्थात यह भारतीय जनता द्वारा निर्मित है। इस संविधान द्वारा अन्तिम शक्ति भारतीय जनता को प्रदान की गई है। संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि **'हम भारत के लोग इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित व आत्मार्पित करते हैं'** अर्थात भारतीय जनता ही इस की निर्माता है, जनता ने स्वयं की इच्छा से इसे अंगीकार, अधिनियमित व आत्मर्पित किया है। इसे किसी अन्य सत्ता द्वारा थोपा नहीं गया है।
2. **प्रस्तावना (Preamble)** – भारतीय संविधान के मौलिक उद्देश्यों व लक्ष्यों को संविधान की प्रस्तावना में दर्शाया गया है। डॉ. के.एम. मुन्शी ने इसे संविधान की राजनीतिक कुंडली कहा है। इसके महत्त्व को देखते हुए इसे संविधान की आत्मा भी कहा जाता है। प्रस्तावना की शुरुआत में 'हम भारत के लोग' से अभिप्राय है कि अन्तिम प्रभुसत्ता भारतीय जनता में निहित है। यह संविधान की मुख्य विशेषता है।
3. **विश्व का सबसे विशाल संविधान (Largest Constitution of the World)** – जहां अमेरिका के संविधान में 07 अनुच्छेद, कनाडा के संविधान में 147 अनुच्छेद, आस्ट्रेलिया के संविधान में 128 अनुच्छेद व दक्षिण अफ्रीका के संविधान में 153 अनुच्छेद हैं वहीं हमारा संविधान व्यापक व विस्तृत संविधान है। इसमें 395 अनुच्छेद 22 भाग व 12 अनुसूचियां, 05 परिशिष्ट है। इसमें अब तक 101 संशोधन हो चुके हैं और संशोधन की यह प्रक्रिया अनवरत जारी है। इस कारण भी इसका स्वरूप विशाल हो जाता है। हमारा संविधान संघात्मक है, इसमें संघ व राज्यों के बीच सम्बन्धों का बहुत व्यापक वर्णन किया गया है। संविधान के एक अध्याय में तो राज्य के नीति निर्देशक सिद्वांतो का ही उल्लेख है जो अधिकांश देशों के संविधान में नहीं है। संविधान की इसी विशालता को लेकर हरिविष्णु कामथ ने कहा था कि ''हमें इस बात का गर्व है कि हमारा संविधान विश्व का सबसे विशाल संविधान है।''

***संविधान का 101वां संशोधन वस्तु व सेवा कर (GST) से संबंधित है जिसे राष्ट्रपति जी ने सितम्बर, 2016 में हस्ताक्षरित किया है।**

4. **लिखित एवं निर्मित संविधान (Written and Created Constitution)** – भारतीय संविधान संविधान सभा द्वारा निर्मित एवं लिपिबद्ध किया गया दस्तावेज है। संविधान सभा ने इसे 2 वर्ष 11 माह 18 दिन में तैयार किया था। विस्तृत संविधान होने के बावजूद इसे देश की परिस्थितियों व आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए उसमें संशोधन की व्यवस्था भी की गई है। अब तक इसमें 101 संशोधन हो चुके हैं।

5. **संसदीय शासन व्यवस्था (Parliamentary System of Government)** – डॉ. अम्बेडकर के अनुसार '' संसदात्मक प्रणाली में शासन के उत्तरदायित्व का मूल्यांकन एक निश्चित समय बाद तो होता ही है इसके साथ साथ दिन प्रतिदिन भी होता रहता है। इस प्रणाली में कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है। राष्ट्रपति का पद गरिमा व प्रतिष्ठा का होता है पर उसकी स्थिति सांविधानिक प्रधान की है, वास्तविक शक्तियां मंत्रिमण्डल के द्वारा प्रयोग की जाती हैं। संसद का विश्वास समाप्त होने पर मंत्रिमण्डल को त्यागपत्र देना पड़ता है। इस व्यवस्था से प्रधानमंत्री ही मंत्रिमण्डल का नेतृत्व करता है भारत में संसदीय व्यवस्था को केन्द्र के साथ राज्यों में भी अपनाया गया है जहां राज्यपाल सांविधानिक प्रमुख होता है।

6. **मौलिक अधिकार व कर्त्तव्य (Fundamental Rights & Duties)** – भारतीय संविधान में नागरिकों के मूल अधिकारों का वर्णन संविधान के भाग – 3 में अनुच्छेद 12 से 35 तक किया गया है। संविधान निर्माताओं ने 07 मौलिक अधिकार देश के नागरिकों को दिये थे 1. समता का अधिकार 2. स्वतंत्रता का अधिकार 3. शोषण के विरुद्ध अधिकार 4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार 5. संस्कृति व शिक्षा सम्बन्धी अधिकार 6. सांविधानिक उपचारों का अधिकार 7. सम्पति का अधिकार। भारतीय संविधान में 44वें संशोधन के बाद सम्पत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकारों की सूची से हटा दिया गया है। अतः अब मौलिक अधिकार 06 रह गये है। इन अधिकारों का हनन होने पर नागरिक न्यायालय की शरण ले सकते हैं। 86वें संवैधानिक संशोधन (दिसम्बर 2002) जो कि जुलाई 2009 में संसद में पारित किया गया व 1 अप्रैल 2010 को लागू हुआ के द्वारा शिक्षा (प्रारम्भिक) के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में संविधान में शामिल कर लिया गया है। अब अनुच्छेद 21 के बाद एक नया अनुच्छेद 21क जोड़ा गया है जिसके अनुसार 6 से 14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों को अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा प्राप्त हो, की व्यवस्था करना राज्य का दायित्व है। याद रखें कि यह अधिकार स्वतंत्रता के अधिकार में जोड़ा गया है।

एम. सी. छागला के अनुसार– ''एक स्वतंत्र न्यायालय को नागरिकों के अधिकारों की रक्षा का काम सौप कर भारतीय संविधान में ऐसी व्यवस्था की गई है कि जिस पर कोई भी सभ्य देश गर्व कर सकता है।''

42 वें संविधान संशोधन 1976 के द्वारा नागरिकों के 10 मूल कर्त्तव्य निर्धारित किये गये हैं। जिनका पालन करना प्रत्येक नागरिक का संवैधानिक दायित्व है। इसमें संविधान का पालन करना भारत की सम्प्रभुता एकता व अखण्डता की रक्षा करना, भाई चारे की भावना रखना, प्रकृति व पर्यावरण की रक्षा करना आदि प्रमुख कर्त्तव्य है। अप्रेल 2010 से लागू शिक्षा के अधिकार संबधी 86वें संविधान संशोधन द्वारा 11वां मूल कर्तव्य भी संविधान में जोड़ दिया गया है, जिसके अनुसार अपने 6–14 वर्ष की आयु के बच्चों को शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराना अभिभावकों का कर्तव्य है। अतः वर्तमान में मूल कर्तव्यों की संख्या 11 है।

7. **राज्य के नीति निर्देशक तत्व (Directive Principles of State Poilcy)** – आयरलैण्ड के संविधान से प्रेरित होकर संविधान के भाग 4 में नीति निर्देशक तत्वों का वर्णन किया गया है। राज्य के नीति निर्देशक तत्व वे विचार हैं जो भविष्य में बनने वाली सरकारों के समक्ष पथ प्रदर्शक की भूमिका का निर्वहन करते हैं। यद्यपि इनके क्रियान्वयन के लिए सरकार को बाध्य नहीं किया जा सकता। ये न्यायालय में वाद योग्य भी नहीं है। लोक कल्याणकारी राज्य के लिए आवश्यक होने के कारण किसी भी सरकार द्वारा इनकी उपेक्षा संभव नहीं है।

8. **समाजवादी राज्य (Socialist State)** – 42 वें संविधान संशोधन 1976 द्वारा भारत को समाजवादी गणराज्य घोषित किया गया है। यद्यपि मूल संविधान में यह शब्द प्रयुक्त नहीं था। प्रस्तावना में यह शब्द भारतीय राज व्यवस्था को एक नई दिशा दिये जाने की भावना को दृष्टिगत रखकर जोड़ा गया है।

9. **वयस्क मताधिकार (Adult Franchise)** – हमारे देश के संविधान में 18 वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नागरिक को समान रूप से मताधिकार प्रदान किया गया है। यद्यपि मूल संविधान में आयु 21 वर्ष थी किन्तु संविधान में 61वें संशोधन द्वारा आयु सीमा 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गई है।

10. **पंथ निरपेक्ष राज्य (Secular State)** – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25 के अनुसार धर्म के क्षेत्र में प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्रता प्रदान की गई है। धर्म के आधार पर किसी भी नागरिक से भेदभाव नहीं किया जा सकता। राज्य का कोई आधिकारिक धर्म नहीं है। किन्तु भारत में यूरोपीय मॉडल की भॉति राज्य और धर्म के बीच पार्थक्य नहीं है। संविधान राज्य को अधिकृत करता है कि वह धर्म से जुड़ी कुरीतियों का निराकरण करने के लिए धार्मिक मामलों में मूल्य आधारित हस्तक्षेप करें। इसे प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री राजीव भार्गव ने धर्म निरपेक्षता का उसूली फासले का सिद्धांत कहा है।

11. **विलक्षण दस्तावेज (Distinguished Document) –** संविधान निर्माताओं की बुद्विमता व दूरदृष्टि का प्रमाण है कि उन्होंने संविधान में जनता द्वारा मान्य आधारभूत मूल्यों व सर्वोच्च आंकाक्षाओं को स्थान दिया। हमारा संविधान एक विलक्षण दस्तावेज है। दक्षिण अफ्रीका ने तो इसे प्रतिमान के रूप में अपने देश का संविधान बनाने हेतु काम में लिया है।

12. **एकात्मक व संघात्मक तत्वों का अद्भुत संयोग (Remarkable Fusion of Unitary and Federal Elements) –** भारत एक संघात्मक राज्य है, संविधान में संघ शब्द के स्थान पर Union of states शब्द का प्रयोग किया गया है संविधान के पहले अनुच्छेद में ही कहा गया है कि ''भारत राज्यों का एकक होगा'' जिसे प्रचलन में 'राज्यों का संघ' भी कहा जाता है। संविधान निर्माताओं की आकांक्षा ऐसा संविधान बनाने की थी जिसमें केन्द्र सरकार भारत की एकता को बनाये रखे तथा राज्यों को भी स्वायतत्ता मिले। इस लिए इसमें संघात्मक व एकात्मक तत्वों का मिश्रण किया गया है। संविधान के अनेक प्रावधान केन्द्र को राज्यों की अपेक्षा शक्तिशाली बनाते हैं। जैसे अतिमहत्वपूर्ण विषयों को संघ सूची में स्थान, समवर्ती सूची में केन्द्र के निर्णय को प्रमुखता, अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र के पास, आपात काल में केन्द्र का राज्यों पर नियंत्रण इकहरी नागरिकता, अखिल भारतीय सेवायें, संसद को राज्यों के पुर्नगठन का अधिकार (जम्मू कश्मीर को छोडकर) राष्ट्रपति द्वारा राज्यपालों की नियुक्ति, राज्यों की केन्द्र पर आर्थिक निर्भरता केन्द्र को मजबूती प्रदान करती है। राज्य अपना पृथक् संविधान नहीं रख सकते केवल एक ही संविधान केन्द्र व राज्य दोनों पर लागू होता है।

13. **स्वतंत्र न्याय पालिका (Independent Judiciary) –** संविधान की सर्वोच्चता प्रजातंत्र की रक्षा, जनता के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए भारतीय संविधान में कई सवैधानिक व्यवस्थायें की गई है। भारत के राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च तथा उच्च न्यायालयों के न्यायधीशों की नियुक्ति की जाती है तथा उन्हें संसद में महाभियोग द्वारा हटाया जा सकता हैं। कार्यपलिका के आदेश तथा व्यवस्थापिका के कानून यदि संवैधानिक व्यवस्थाओं का उल्लंघन करते हैं तो न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन उन्हें अवैध घोषित करने का अधिकार है। नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा के लिए अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत पुनरावलोकन द्वारा बन्दी प्रत्यक्षीकरण, अधिकार पृच्छा जैसे लेखों को जारी किया जा सकता है। न्यायिक स्वतंत्रता के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए ये सभी व्यवस्थायें की गई है।

14. **कठोरता व लचीलेपन का मिश्रण (Combination of Rigidity & Flexibility) –** भारतीय संविधान कठोरता व लचीलेपन का मिश्रण है। किसी भी देश की परिस्थितियों में बदलाव के साथ संवैधानिक संशोधन की आवश्यकता होती है। संवैधानिक संशोधन के लिए भारतीय संविधान में संशोधन विधि अनुच्छेद 368 में दी गई है, संविधान में संशोधन व्यवस्था कुछ भागों के सम्बन्ध में कठोर तो कुछ में लचीली रखी गई है। संविधान में कठोरता का समावेश संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान व लचीलेपन का ब्रिटेन के संविधान से लिया गया है। भारतीय संविधान में संशोधन की कुल तीन विधियां है, जिनमें से पहली विधि का वर्णन अनुच्छेद 368 में नहीं है। 1. संविधान के कुछ भागों में संसद के दोनों सदनों के साधारण बहुमत से संशोधन किया जाता है जैसे राज्यों का पुनर्गठन, राज्यों में विधान परिषद की स्थापना या समाप्ति, केन्द्र प्रशासित क्षेत्र बनाना, संसद सदस्यों के वेतन आदि। 2. कुछ विषयों में संशोधन के लिए संसद के दोनों सदनों के पूर्ण बहुमत व उपस्थित सदस्यों के दो तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है। 3. कुछ विषयों में संशोधन के लिए संसद के दोनों सदनो के पूर्ण बहुमत, उपस्थित सदस्यों के दो तिहाई बहुमत के अतिरिक्त कम से कम आधे राज्यों की विधान मण्डलों का समर्थन आवश्यक है। राष्ट्रपति निर्वाचन की पद्धति, केन्द्र व राज्यों के बीच शक्ति विभाजन आदि विषयों के संशोधन के लिए यह जटिल प्रक्रिया अपनाई जाती है। संशोधन की इन तीन विधियों से स्पष्ट है कि संविधान संशोधन के लिए लचीले व कठोरता का मिश्रण किया गया है। डॉ. ह्वीयर के शब्दों में भारतीय संविधान अधिक कठोर तथा अधिक लचीले के मध्य एक अच्छा संतुलन स्थापित करता है।

15. **न्यायिक पुनरावलोकन व संसदीय सम्प्रभुता का समन्वय (Harmony Between Judicial Review & Parliamentary Supremacy) –** भारतीय संविधान में न्यायिक पुनरावलोकन के सिद्वांत व संसदीय सम्प्रभुता के मध्य मार्ग को अपनाया गया है। हमारे संविधान में संसद को सर्वोच्च बनाया गया है, साथ ही उसको नियंत्रित करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या करने का अधिकार प्रदान किया गया है। न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय कार्यपालिका के उन आदेशों तथा संसद द्वारा निर्मित विधि को अवैध घोषित कर सकता है जो संविधान की भावना के अनुरूप न हो।

16. **विश्व शांति का समर्थक (Advocate of World Peace) –** '' वसुधैव कुटुम्बकम'' के सिद्धांत को अपनाते हुए भारतीय संविधान में विश्व शांति का समर्थन किया गया है। नीति निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद 51 के अनुसार राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा तथा राष्ट्रों के बीच न्यायपूर्ण व सम्मानजनक सम्बधों की स्थापना करे। भारत न तो किसी देश की सीमा व आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करना चाहता है न ही अपने देश में किसी देश के हस्तक्षेप को बर्दाश्त करता है। भारत सरकार ने इसी भावना के अनुरूप पंचशील एवम् गुटनिरपेक्षता की नीति को अपनाया है।

17. **आपातकालीन उपबन्ध (Emergency Provisions) –** संविधान के भाग 18 में आपातकालीन उपबंधों का स्पष्ट

उल्लेख किया गया है। अनुच्छेद 352 के अनुसार बाहरी आक्रमण, सशस्त्र विद्रोह एवम युद्व की स्थिति में, अनुच्छेद 356 के अनुसार राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता की स्थिति में तथा अनुच्छेद 360 के अनुसार वित्तीय संकट उत्पन्न होने पर सम्पूर्ण देश या देश के किसी भाग में आपातकाल लागू किया जा सकता है। इसमें शासन राष्ट्रपति के अधीन संचालित होता है।

18. **इकहरी नागरिकता (Single Citizenship)** – भारतीय संविधान द्वारा संघात्मक शासन की व्यवस्था की गई है और सामान्यतया संघ राज्य के नागरिकों को दोहरी नागरिकता प्राप्त होनी चाहिए– प्रथम, संघ की नागरिकता द्वितीय राज्य की नागरिकता। लेकिन भारतीय संविधान निर्माताओं का विचार था कि दोहरी नागरिकता भारत की एकता को बनाये रखने में बाधक हो सकती है अतः संविधान निर्माताओं द्वारा संविधान में संघ राज्य की स्थापना करते हुए इकहरी नागरिकता के आदर्श को ही अपनाया गया है।

19. **लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का आदर्श (Ideal of Establishing Welfare State)** – संविधान के नीति निदेशक तत्वों से यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान निर्माताओं द्वारा संविधान के माध्यम से कल्याणकारी राज्य की स्थापना का आदर्श निश्चित किया गया है। इस हेतु केन्द्र व राज्य सरकारें नागरिको को पौष्टिक भोजन, आवास, वस्त्र, शिक्षा व स्वास्थ्य की सुविधायें उपलब्ध करवायें। नागरिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठायें। जहां तक संभव हो आर्थिक समानता की स्थापना की जाये। केन्द्र व राज्य सरकारें संविधान में दिये गये लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं। जिसके लिए नियोजन की पद्वति को अपनाया गया है।

20. **अल्पसंख्यक एवम् पिछड़े वर्गों के कल्याण की विशेष व्यवस्था (Special Provisions for Welfare of Minority & Backward Classes)** – भारतीय संविधान में अल्पसंख्यकों के धार्मिक, भाषायी और सांस्कृतिक हितों की रक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की गई है। इसके अतिरिक्त संविधान अनुसूचित जातियों व जनजाति क्षेत्रों के नागरिकों को सेवाओं, संसद विधान सभाओं और अन्य क्षेत्रों में विशेष संरक्षण प्रदान किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 330 व 332 के तहत अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों को लोक सभा व विधान सभाओं में आरक्षण प्रदान किया गया है। प्रारंभ में यह व्यवस्था 25 जनवरी 1960 तक के लिए की गई थी, किन्तु संविधान में संशोधन कर इसकी समय सीमा को बढ़ाया जाता रहा है। अब 95 वें संवैधानिक 2010 के आधार पर आरक्षण की व्यवस्था को 25 जनवरी 2020 तक के लिए बढा दिया गया है। अनुच्छेद 335 में अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए सरकारी सेवाओं में आरक्षण के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई। इसी तरह अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए केन्द्र सरकार की सेवाओं में सितम्बर 1993 से 27 प्रतिशत आरक्षण लागू किया गया।

प्रस्तावना (Preamble)

हमारे संविधान के प्रारंभ में एक प्रस्तावना है जिसके द्वारा संविधान में मूल उद्देश्यों को स्पष्ट किया है जिससे संविधान की क्रियान्वति तथा उसका पालन संविधान की मूल भावना के अनुसार किया जा सके। संविधान के गौरव पूर्ण मूल्यों को संविधान की प्रस्तावना में रखा गया है।

संविधान की मूल प्रस्तावना (Preamble) – ''हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, लोकतंत्रात्मक, गणराज्य बनाने के लिये तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित कराने वाली बन्धुता बढाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ईस्वी (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत 2006 विक्रमी) को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।'' संविधान में 42 वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 की धारा 2 के द्वारा (3.1.77 के अनुसार) प्रस्तावना में निम्न संशोधन किये गये हैं–

1. सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोक तंत्रात्मक गणराज्य के स्थान पर सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य प्रतिस्थापित किया गया है।
2. राष्ट्र की एकता के स्थान पर राष्ट्र की एकता और अखण्डता को प्रतिस्थापित किया गया है।

इस संशोधन के बाद प्रस्तावना निम्नानुसार है।

हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनानें के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, सम्वत् 2006 विक्रमी) को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

1.2 प्रस्तावना की विस्तृत विवेचना (Description of Preamble) –

(अ) **घोषणात्मक भाग (Declaratory Part)**

- 'हम भारत के लोग '' – संविधान के निर्माताओं के

अनुसार सम्प्रभुता अंततः जनता में निहित है। सरकार के पास अथवा राज्य सरकार के विभिन्न अंगों के पास जो शक्तियाँ है, वे सब जनता से मिली हैं। प्रस्तावना में प्रयुक्त 'हम भारत के लोग' इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित व आत्मार्पित करते हैं, पदावली से यह स्पष्ट है कि भारतीय संविधान का स्त्रोत भारत की जनता है, अर्थात जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की सभा द्वारा संविधान का निर्माण किया गया है।

(ब) उद्देश्य भाग (Obejective Part)

- **सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न** – इस पदावली से यह व्यक्त होता है कि भारत पूर्ण रूप से प्रभुता सम्पन्न राज्य है। आंतरिक और विदेशी मामलों में किसी अन्य विदेशी शक्ति के अधीन नहीं है।
- **समाजवाद** – समाजवाद शब्द को 42 वें संशोधन द्वारा जोड़ा गया है। प्रस्तावना में समाजवाद शब्द को सम्मिलित करके उसे और अधिक स्पष्ट किया गया है। इसमें समाज के कमजोर और पिछड़े वर्गों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने और आर्थिक विषमता को दूर करने का प्रयास करने के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया है।
- **पंथ निरपेक्ष** – 42 वें संशोधन के द्वारा 1976 में इसे जोड़ा गया था। इसका अर्थ यह है कि भारत धर्म के क्षेत्र में न धर्म विरोधी है न धर्म का प्रचारक, बल्कि वह तटस्थ है जो सभी धर्मो के साथ समान व्यवहार करता है।
- **लोकतंत्रात्मक** – इससे तात्पर्य है कि भारत में राजसत्ता का प्रयोग जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि करते हैं और वे जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं। संविधान सभी को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय का आश्वासन देता है।
- **गणराज्य** – इसका अर्थ यह है कि भारत में राज्याध्यक्ष या सर्वोच्च व्यक्ति वंशानुगत न होकर निर्वाचित प्रतिनिधि होता है। भारत के राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा होता है।

(स) विवरणात्मक भाग (Distributory Part)

1. सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय –

- **सामाजिक न्याय** – सामाजिक न्याय का अर्थ है कि सभी नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के समानता प्राप्त हो। जाति, धर्म, वर्ग, लिंग, नस्ल या अन्य किसी आधार पर नागरिकों में भेदभाव नहीं हो।
- **आर्थिक न्याय** – अनुच्छेद 39 में आर्थिक न्याय के आदर्श को स्वीकार किया गया है इसमें राज्यों को अपनी नीति का संचालन इस प्रकार करने के लिए कहा गया है कि समान रूप से सभी नागरिकों को आजीविका के साधन प्राप्त करने का अधिकार हो, समुदाय की भौतिक सम्पत्ति का स्वामित्व और वितरण इस प्रकार हो जिसमें अधिकाधिक सामूहिक हित संभव हो सकें। पुरुषों व स्त्रियों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले, उत्पादन व वितरण के साधनों का अहितकर केन्द्रीयकरण न हो।
- **राजनीतिक न्याय** – भारतीय संविधान वयस्क मताधिकार की स्थापना, सांविधानिक उपचारों द्वारा राजनीतिक न्याय के आदर्श को मूर्त रूप प्रदान करता है।

2. स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व–

- **स्वतन्त्रता** – भारतीय संविधान में नागरिकों को विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता दी गई है।
- **समानता** – देश के सभी नागरिकों को प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्रदान की गई है।
- **बन्धुत्व** – प्रस्तावना में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता की भावना बढाने के लिए संकल्प किया गया है।

3. व्यक्ति की गरिमा व राष्ट्र की एकता व अखण्डता–

- **व्यक्ति की गरिमा व राष्ट्र की एकता** – हमारे संविधान निर्माता भारत की विविधताओं के अन्तर्गत विद्यमान एकता से परिचित थे। वे चाहते थे कि हमारे नागरिक क्षेत्रीयता, प्रान्तवाद, भाषावाद व सम्प्रदायवाद को महत्त्व न देकर देश की एकता के भाव को अपनायें। इसलिए हमारे संविधान में बन्धुत्व का आदर्श दो आधारों पर टिका है। यह आधार हैं– राष्ट्र की एकता व व्यक्ति की गरिमा।
- **अखण्डता** – 42 वें संविधान संशोधन द्वारा उद्देशिका में ''अखण्डता'' शब्द को सम्मिलित किया गया है। इसका मूल उद्देश्य भारत की एकता और अखण्डता को सुनिश्चित करना है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि प्रस्तावना या उद्देशिका में संविधान के मूलभूत आदर्शों को दर्शाया गया है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संविधान
- प्रस्तावना संविधान का सार
- विश्व का सबसे विशाल संविधान
- लिखित एवं निर्मित संविधान
- संसदीय शासन व्यवस्था
- मौलिक अधिकार व कर्तव्य
- राज्य के नीति निर्देशक तत्व
- समाजवादी राज्य
- पंथ निरपेक्ष राज्य
- वयस्क मताधिकार
- विलक्षण दस्तावेज
- एकात्मक व संघात्मक तत्वों का अदभूत संयोग

- स्वतंत्र न्यायपालिका
- कठोरता व लचीलेपन का मिश्रण
- विश्व शांति का समर्थक
- आपातकालीन उपबन्ध
- एकल नागरिकता एवं लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का आदर्श
- अल्पसंख्यक एवम् पिछड़े वर्गों के कल्याण की विशेष व्यवस्था
- प्रस्तावना के महत्त्वपूर्ण बिन्दु – भारतीय संविधान का एक संक्षिप्त एवं सारपूर्ण घोषणा पत्र

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. भारतीय संविधान को संविधान सभा द्वारा अंगीकार किया गया –
   (अ) 1 मई 1947 (ब) 9 दिसम्बर 1946
   (स) 26 नवम्बर 1949 (द) 26 जनवरी 1950 ( )
2. भारत के संविधान में अनुच्छेद हैं–
   (अ) 150 (ब) 395
   (स) 360 (द) 147 ( )
3. नीति निर्देशक तत्व किस देश के संविधान से लिये गये हैं –
   (अ) इंग्लैड (ब) फ्रांस
   (स) आयरलैण्ड (द) आस्ट्रेलिया ( )
4. राज्यों में संवैधानिक संकट होने पर राष्ट्रपति शासन संविधान के किस अनुच्छेद के तहत लगाया जाता है?
   (अ) अनुच्छेद 352 (ब) अनुच्छेद 356
   (स) अनुच्छेद 362 (द) अनुच्छेद 366 ( )
5. 42 वें संविधान संशोधन द्वारा प्रस्तावना में किन शब्दों को जोड़ा गया है–
   (अ) गणराज्य
   (ब) समाजवादी, पंथ निरपेक्ष तथा अखण्डता को
   (स) लोकतंत्र
   (द) बन्धुत्व ( )
6. भारत के संविधान की प्रस्तावना में प्रयुक्त '' हम भारत के लोग '' वाक्यांश से तात्पर्य है –
   (अ) संविधान सभा के सदस्य
   (ब) प्रारूप समिति के सदस्य
   (स) स्वतंत्रता सेनानी
   (द) संविधान को स्वीकार करने वाले भारत के नागरिक ( )
7. प्रस्तावना न्याय का स्वरूप है –
   (अ) सामाजिक न्याय (ब) आर्थिक न्याय
   (स) राजनीतिक न्याय (द) उपर्युक्त सभी ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. भारतीय संविधान के निर्माण में कितना समय लगा?
2. भारतीय संविधान में कितनी अनुसूचियां है?
3. भारत के संविधान की प्रस्तावना से क्या अभिप्राय: है?
4. संविधान में अब तक कितने संशोधन किये जा चुके है?
5. '' प्रस्तावना संविधान की प्रेरणा और प्राण है '' क्यों?
6. सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति किसके द्वारा की जाती है?
7. देश के किसी हिस्से में सशस्त्र विद्रोह की स्थिति में किस अनुच्छेद के तहत आपातकाल लागू किया जाता है?
8. प्रस्तावना में समाजवाद शब्द किस सांविधानिक संशोधन द्वारा जोड़ा गया?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. भारत के संविधान की कोई 5 विशेषताएं बताइए।
2. संविधान में वयस्क मताधिकार से क्या तात्पर्य है?
3. पंथ निरपेक्ष राज्य से क्या अभिप्राय है?
4. प्रस्तावना को लिखिए ?
5. संविधान में आपातकालीन उपबंधो से संबंधित अनुच्छेद लिखिये।
6. ''भारतीय संविधान कठोरता व लचीलेपन का मिश्रण है''। इस पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
7. लोकतंत्रात्मक गणराज्य से क्या अभिप्राय है?
8. प्रस्तावना में प्रयुक्त समाजवाद शब्द की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
9. धर्म निरपेक्षता का उसूली फासले का सिद्धांत क्या है?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय संविधान की मुख्य विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. '' भारतीय संविधान की विशेषताएँ, भारत को विश्व के सफलतम लोकतंत्रों में से एक बनाने में सहायक सिद्ध हुई है। '' इस कथन की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
3. 'संविधान की प्रस्तावना, भारतीय संविधान का सार है,' समझाइए।

बहुचयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. स 2. ब 3. स 4. ब
5. ब 6. द

2. मूल अधिकार, नीति निर्देशक तत्व एवं मूल कर्त्तव्य
(Fundamental Rights; Directive Principles & Duties)

" संविधान में मूल अधिकारों को रखने का उद्देश्य नागरिकों को समानता, स्वतन्त्रता, न्याय और सुरक्षा प्रदान करना था "

—न्यायाधीश सप्रू

मूल अधिकार अधिकारों का ही एक स्वरूप है। वे अधिकार जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए अनिवार्य होने के कारण संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदान किये गये हैं, मूल अधिकार कहलाते हैं। इन अधिकारों में राज्य द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

2.1 मूल अधिकारों की आवश्यकता व महत्त्व (Importance & Necessity of Fundamental Rights) –

1. **प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करना** – मूल अधिकार लोकतंत्र की आधारशिला हैं। इनके द्वारा प्रत्येक नागरिक को शारीरिक, मानसिक व नैतिक विकास की सुरक्षा प्रदान की जाती है।
2. **शासन की स्वेच्छाचारिता पर रोक** – कौटिल्य के अर्थशास्त्र में इस बात का उल्लेख है कि प्राचीन भारतीय राज्य व्यवस्था में स्वेच्छाचारी शासकों के लिए कोई स्थान न था। भारतीय राजाओं की शक्ति पर ऐसे प्रतिबन्ध लगाये गये थे कि वे सत्ता का दुरुपयोग न कर सकें। संविधान में दिये मूल अधिकार शासन व विधान मण्डल के ऊपर अंकुश लगाने में सहायता प्रदान करते हैं। ये शासन के अधिकारों की शक्ति व बहुमत दल की तानाशाही से नागरिकों को सुरक्षा देते हैं। मूल अधिकार साधारण कानून से भी श्रेष्ठ हैं। राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बना सकता जो इन अधिकारों को छीनती है या न्यून करती है।
3. **न्यायिक सुरक्षा** – मूल अधिकारों का हनन होने की स्थिति में नागरिक न्यायालय की शरण ले सकता है।
4. **लोकतंत्र के आधार स्तम्भ** – मूल अधिकार लोकतंत्र के लिए आधार स्तम्भ की भूमिका का निर्वहन करते हैं, इनके अभाव में लोकतन्त्रामक शासन की कल्पना नहीं की जा सकती।
5. **समानता के कारक** – संविधान द्वारा राष्ट्र के समस्त नागरिकों को मूल अधिकार प्रदान कर उनमें परस्पर समानता स्थापित की गई है। सभी विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया गया है।

   नागरिकों के मूल अधिकार मानवीय स्वतन्त्रता के मापदण्ड और संरक्षक दोनों ही हैं। इस कारण इनका अपना मनोवैज्ञानिक महत्त्व है। वर्तमान युग का कोई राजनीतिक दार्शनिक इनकी उपेक्षा नहीं कर सकता।

2.2 भारत के संविधान में मूल अधिकार (Fundamental Rights in Indian Constitution) –

राष्ट्र की एकता व आम नागरिकों के हित के लिए किसी भी राज्य द्वारा अब तक बनाये गये मानव अधिकारों के चार्टरों में सर्वाधिक विस्तृत चार्टर संविधान के भाग 3 में शामिल है। मूल अधिकारों के सम्बन्ध में संविधान में कुल 23 अनुच्छेद है। ये अनुच्छेद 12 से 30 व 32 से 35 तक दिये गये हैं। इनमें भी कुछ अनुच्छेद असाधारण रूप से विस्तृत हैं। विशेष रूप से 19वें अनुच्छेद में 450 शब्द होने से इसका आकार अत्यधिक व्यापक हो गया है। मौलिक अधिकार अधिकारों का एक स्वरूप है। मौलिक अधिकारों का अर्थ स्पष्ट करते हुए भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश के सुब्बाराव ने कहा था कि " मौलिक अधिकार परम्परागत प्राकृतिक अधिकारों का दूसरा नाम है। ये वे नैतिक अधिकार हैं जिन्हें हर काल में, हर जगह, हर मनुष्य को प्राप्त होना चाहिए क्योंकि अन्य प्राणियों के विपरीत वह चेतन तथा नैतिक प्राणी है। मानव व्यक्तित्व के विकास के लिए मौलिक अधिकार आवश्यक हैं। वे ऐसे अधिकार हैं जो मनुष्य को स्वेच्छानुसार जीवन व्यतीत करने का अवसर प्रदान करते हैं।"

भारतीय संविधान द्वारा भारतीय नागरिकों को 7 मूल अधिकार प्रदान किये गये थे किन्तु 44वें संविधान संशोधन द्वारा सम्पति के अधिकार को मूल अधिकारों से विलोपित कर एक कानूनी अधिकार के रूप में ही सम्मिलित किया गया है। इस तरह मूल अधिकारों को छः श्रेणियों के तहत गारन्टी प्रदान की गई है–

1. समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14 से 18)
2. स्वतन्त्रता का अधिकार (19 से 22)
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार (23 से 24)
4. धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार (25 से 28)
5. सांस्कृतिक एवं शिक्षा संबंधी अधिकार (29 से 30)
6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (32)

1. समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14 से 18) (Right to Equality) –

भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिक को कानून के समक्ष समानता, राज्य में रोजगार के अवसरों की समानता एवम् सामाजिक समानता प्रदान की गई है। इस हेतु संविधान में

निम्न प्रावधान किये गये हैं–

- **कानून के समक्ष समानता** – अनुच्छेद 14 के तहत राज्य क्षेत्र में राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। विधि के समक्ष सभी समान हैं और बिना किसी विभेद के विधि के समान संरक्षण के हकदार हैं।
- **धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध** – अनुच्छेद 15 राज्यों को यह आदेश देता है कि किसी नागरिक के साथ केवल उसके धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद न किया जावे। सभी नागरिकों को दुकानों, सार्वजनिक स्थलों यथा भोजनालयों, होटलों, मनोरंजन स्थलों, कुंओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों के प्रयोग का अधिकार प्रदान किया गया है। इसी अनुच्छेद में स्त्रियों व बच्चों तथा सामाजिक व शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के नागरिकों के लिए विशेष प्रावधान का अधिकार दिया गया है।
- **लोक नियोजन के विषय में अवसरों की समानता** अनुच्छेद 16– इस अनुच्छेद के तहत देश के सभी नागरिकों को राज्य के अधीन नौकरी में समान अवसर प्रदान करने की गारंटी दी गई है। इस बारे में व्यक्ति के धर्म,जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद नहीं किया जावेगा। किन्तु राज्य को यह अधिकार है कि वह राजकीय सेवाओं के लिए आवश्यक योग्यतांए निर्धारित कर राज्य के मूलनिवासी हेतु आरक्षण, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए आरक्षण का प्रावधान कर दे। यदि आप ध्यान से सोचें तो पायेंगे कि इस आरक्षण का उद्देश्य मूलतः समानता की स्थापना ही है।
- **अस्पृश्यता का अंत, अनुच्छेद 17** – सामाजिक समानता बढाने हेतु संविधान में अस्पृश्यता का पूर्ण निषेध किया गया है। इसमें कहा गया है कि यदि ऐसा आचरण किया जावेगा तो दंडनीय अपराध माना जाएगा। इस अनुच्छेद का उद्देश्य व्यक्ति को उसकी जाति के कारण ही अस्पृश्य माने जाने के अमानवीय आचरण को समाप्त करना है। इसे पूर्ण रूपेण समाप्त करने हेतु सरकार ने अस्पृश्यता निवारण अधिनियम 1955 का संशोधन कर नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955 कर दिया है। अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति निरोधक अधिनियम 1989 पारित किया है। यह कानून अस्पृश्यता के अब तक बने कानूनों में सबसे अधिक कठोर है। अतः जरूरत इस बात की है कि इसका अस्पृश्यता निवारण हेतु सदुपयोग किया जावे। साथ ही यह सुनिश्चित किया जावे कि इसका दुरुपयोग न हो।
- **उपाधियों का अंत अनुच्छेद 18** – ब्रिटिश शासन काल में सम्पत्ति व राज शक्ति के आधार पर उपाधियां प्रदान की जाती थी जो सामाजिक जीवन में भेद उत्पन्न करती थी। संविधान में सेना तथा विद्या सम्बन्धी उपाधियों के अतिरिक्त राज्य द्वारा किसी भी तरह की उपाधि दिया जाना निषेध है। इसके अलावा भारत का नागरिक राष्ट्रपति की आज्ञा बिना विदेशी राज्य की कोई उपाधि स्वीकार नहीं करेगा।

2. **स्वतन्त्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19) (Right to Freedom)–**

भारतीय संविधान में व्यक्ति को छः बुनियादी स्वतन्त्रताएं भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, शस्त्र रहित शांति पूर्वक सम्मेलन की स्वतन्त्रता, भारत राज्य में अबाध भ्रमण व निवास की स्वतन्त्रता एवम आजीविका, व्यापार व कारोबार की स्वतन्त्रता प्रदान की गई हैं।

- **विचार व अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 19 (1) (क)** – भारत के सभी नागरिकों को विचार अभिव्यक्त करने, भाषण देने तथा अन्य व्यक्तियों के विचारों का प्रचार प्रसार करने की स्वतन्त्रता है। इसमें प्रेस की स्वन्त्रता भी सम्मिलित है। किन्तु इस अधिकार का दुरुपयोग रोकने के लिए प्रतिबन्ध भी लगाये गये हैं। इस स्वतन्त्रता पर भारत की प्रभुता व अखण्डता के पक्ष में राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के हित में, लोक व्यवस्था, शिष्टाचार या सदाचार के हित में, न्यायालय अवमानना, मानहानि, अपराध के लिए उत्तेजित करना आदि के सम्बन्ध में उचित निर्बन्धन लगाये जा सकते हैं।
- **अस्त्र शस्त्र रहित शांतिपूर्ण सम्मेलन की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 19 (1) (ख)** – इसके तहत सभी नागरिकों को शान्ति पूर्ण व बिना अस्त्र शस्त्र के सभा व सम्मेलन का अधिकार दिया गया है। इस अधिकार को भी राज्य हित या सार्वजनिक सुरक्षा हित में सीमित किया जा सकता है।
- **संघ व समुदाय निर्माण की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 19 (1) (ग)** – इसके अनुसार नागरिक मिलकर अपना संगम, संघ या सहकारी सोसाइटी बना सकते हैं किन्तु राज्य हित में इसे भी प्रतिबन्धित किया जा सकता है।
- **सर्वत्र आने जाने की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 19 (1) (घ)** – इसके अनुसार भारत के राज्य क्षेत्र में अबाध रूप से आने जाने का अधिकार दिया गया है।
- **निवास की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 19(1) (ड.)** – इस अनुच्छेद के अनुसार भारत राज्य क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने की गारन्टी दी गई है।
- **वृति व व्यापार की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 19(1) (छ)** – इस अनुच्छेद द्वारा सभी नागरिकों को वृति, आजीविका, व्यापार तथा व्यवसाय करने की स्वतन्त्रता प्रदान की गई है। किन्तु जनहित में नशीली व खतरनाक चीजों के व्यापार करने तथा अन्य ऐसे कार्य करना जो राज्य हित में न हो को निषेध किया जा सकता है।

इनके अलावा अनुच्छेद 20,21,22 द्वारा व्यक्तिगत मौलिक स्वतन्त्रताओं की व्यवस्था की गई है–

1. **अपराधों के लिए दोष सिद्वि के विषय में सरंक्षण अनुच्छेद 20** – इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि किसी भी व्यक्ति को उस समय तक अपराधी नहीं ठहराया जा सकता –
   (अ) जब तक कि उसने अपराध के समय लागू किसी कानून का उल्लंघन न किया हो।

(ब) किसी व्यक्ति को एक अपराध के लिए एक बार से अधिक दण्डित नहीं किया जा सकता।

(स) किसी व्यक्ति को अपराध करने के समय निर्धारित सजा से अधिक सजा भी नहीं दी जा सकती।

2. **जीवन व व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का संरक्षण अनुच्छेद 21** – इसके अनुसार किसी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतन्त्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर अन्य किसी प्रकार से वंचित नहीं किया जा सकता। 44 वें संविधान संशोधन 1979 द्वारा इस अधिकार को और अधिक प्रभावशाली बना दिया गया है। अब आपातकाल में भी जीवन व व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के अधिकारों को सीमित नहीं किया जा सकता। इसे प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार भी कहा जाता है।

3. **शिक्षा का अधिकार** – संविधान के 86 वे संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 21क जोड़ कर शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया है। इसे राज्य के नीति निर्देशक तत्वों से हटा लिया गया है। इसके अनुसार राज्य के 6 से 14 वर्ष के आयु के सब बच्चों को निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा कानूनी रूप से स्वीकृत तरीके से प्रदान करनी होगी। इसी में यह भी कहा गया है कि 6 से 14 वर्ष के आयु के बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करना माता पिता या अभिभावक की जिम्मेदारी है।

4. **बन्दीकरण से संरक्षण** – अनुच्छेद 22 के तहत बन्दी व्यक्तियों को कुछ अधिकार दिये गये है–

(अ) उसे बन्दी बनाने का कारण जानने का अधिकार है।

(ब) उसे इच्छानुसार स्वंय के लिए कानूनी सहायता प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है।

(स) 24 घण्टे के अन्दर बन्दी को न्यायाधीश के सम्मुख पेश किया जाना आवश्यक है। ये अधिकार शत्रु देश के निवासियों एवम निवारक नजरबन्दी अधिनियम के तहत गिरफ्तार किये गये अपराधियों पर लागू नहीं होंगे।

2.3 निवारक नजरबन्दी –

निवारक नजरबन्दी से तात्पर्य बिना किसी न्यायिक प्रक्रिया के नजरबन्दी से है। यह अपराधी को दण्डित करने से नहीं बल्कि अपराध करने से रोकने की प्रक्रिया है। जब राज्य को यह अनुमान हो कि किसी व्यक्ति से जो अपराध करने वाला है, राज्य की सुरक्षा को खतरा हो या खतरे की धमकी मिल रही हो तो राज्य सीमित अवधि के लिए बिना जांच किये बंदी बना सकता है। हालांकि किसी व्यक्ति को 3 महीने से अधिक इस कानून के तहत बन्दी नहीं रख सकते, जब तक कि परामर्श दात्री समिति, जिसमें एक व्यक्ति उच्च न्यायालय का जज हो, की अनुमति प्राप्त न हो चुकी हो।

1. **राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम** – दिसम्बर 1980 को सरकार ने राष्ट्रीय सुरक्षा अध्यादेश लागू किया जो बाद में कानून बन गया। इसका उद्देश्य साम्प्रदायिक व जातीय दंगों व देश की सुरक्षा के लिए खतरनाक गतिविधियों के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों को निरूद्ध करना हैं। राष्ट्रीय सुरक्षा कानून निवारक निरोध कानून की व्यवस्था ही है। जून 1984 को राष्ट्रीय सुरक्षा कानून दूसरा संशोधन अध्यादेश जारी किया गया। अध्यादेश में कहा गया यह जम्मू कश्मीर राज्य के अतिरिक्त सम्पूर्ण भारत में लागू होगा। इसके आधार पर इसमें कुछ परिवर्तन करते हुए इसे और कठोर बना दिया गया है। पहला यह संशोधन किया गया कि किसी व्यक्ति की नजरबन्दी के आदेश की अवधि खत्म होने, आदेश रदद हो जाने अथवा वापिस ले लिये जाने के बाद नया आदेश जारी करके उसे नजरबन्द किया जा सकेगा। दूसरा प्रावधान यह किया गया नजरबन्दी के हर कारण पर अदालतों को अलग अलग विचार करके फैसला करना होगा। आर्थिक क्षेत्र में राष्ट्रीय सुरक्षा कानून की श्रेणी का एक कानून ''विदेशी मुद्रा संरक्षण व तस्करी निरोधक अधिनियम'' 1974 से लागू है।

2. **गैर कानूनी गतिविधियां निवारण अध्यादेश** – पोटा कानून को समाप्त करने के बावजूद राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद से निपटने के लिए कठोर कानून की आवश्यकता अनुभव करते हुए सितम्बर 2004 में गैरकानूनी गतिविधियां निरोधक अध्यादेश जारी किया गया। इसमें पोटा के कई प्रावधानों को सम्मिलित किया गया है।

निवारक निरोध अधिनियम का मूल्यांकन – इस अधिनियम को कटु आलोचनाओं का सामना करना पड़ा है। इन्हें अलोकतांत्रिक प्रतिक्रियावादी संविधान की महान असफलता व निरंकुशता का प्रतीक माना गया। इनके दुरुपयोग की संभावना सदैव बनी रही है। फिर भी निवारक निरोध अधिनियम की आलोचनाओं के बावजूद इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान परिस्थितियों में जब देश आतंकवाद, अलगाववाद की मार झेल रहा है ऐसे समय में इस तरह के कानून आवश्यक व उपयोगी भी हैं। गोपालन बनाम मद्रास राज्य के विवाद में पातंजलि शास्त्री ने निवारक कानून की उपयोगिता इस प्रकार व्यक्त की है–

इस भयावह उपकरण की व्यवस्था, जिसका प्रजातंत्र में कोई स्थान नहीं है, मौलिक अधिकारों की पवित्रता के प्रतिकूल और संविधान में की गई प्रतिज्ञाओं के विरुद्ध है, उन समाज विरोधी तथा विध्वंसकारी तत्वों के विरुद्ध की गई है, जिनसे नवजात प्रजातंत्र के राष्ट्रीय हित को खतरा है।

3. **शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23 व 24 (Right Against Exploitation)** – संविधान के अनुच्छेद 23 व 24 के द्वारा सभी नागरिकों को शोषण के विरुद्ध अधिकार प्रदान कर शोषण की सभी स्थितियां समाप्त करने का प्रयास किया गया है।

- **मानव के क्रय विक्रय व बेगार पर रोक (अनुच्छेद 23)** – इस अनुच्छेद द्वारा बेगार तथा इसी प्रकार का जबरदस्ती करवाये हुए श्रम का निषेध किया गया है। हमारे देश में सदियों से किसी न किसी रूप में दासता की प्रथा विद्यमान थी जिसमें खेतीहर श्रमिकों, बन्धुआ मजदूरों, स्त्रियों व बच्चों से बेगार करवाकर उनका शोषण किया जाता था। संविधान में मानवीय शोषण के इन सभी रूपों को कानून के अनुसार दण्डनीय घोषित किया गया है। फिर भी राज्य हित में सरकार द्वारा व्यक्ति को अनिवार्य श्रम की योजना लागू की जा सकती है लेकिन ऐसा करते समय नागरिकों के बीच धर्म, मूलवंश, जाति,वर्ण या सामाजिक स्तर के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता।
- **बालश्रम का निषेध (अनुच्छेद 24)** – इसके अनुसार 14 वर्ष से कम आयु वाले बच्चों को कारखानों, खानों अथवा जोखिम वाले काम पर नियुक्त नहीं किया जा सकता।

4. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25–28) (Right to Freedom of Religion)

भारत एक बहुधार्मिक देश है। हमारे देश में सभी धर्मो के लोग रहते हैं। संविधान के अनुच्छेद 25–28 में प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार प्रदान किया गया है।

- **अन्तःकरण की स्वतन्त्रता (अनुच्छेद 25)**– इस अनुच्छेद के अनुसार अंतःकरण की स्वतन्त्रता तथा कोई भी धर्म अंगीकार करने, उसका अनुसरण व प्रचार करने का अधिकार प्राप्त है। धार्मिक संस्थाओं में बिना किसी भेद के प्रवेश व पूजा अर्चना का अधिकार दिया गया है।
- **धार्मिक मामलों का प्रबन्ध करने की स्वतन्त्रता (अनुच्छेद 26)**– इस अनुच्छेद में प्रत्येक धर्म के अनुयायियों को निम्न अधिकार प्रदान किये गये हैं–

(अ) धार्मिक और धर्मार्थ प्रयोजनों के लिए संस्थाओं की सीापना व पोषण।
(ब) धर्म विषयक कार्यों का प्रबन्ध करना।
(स) चल अचल सम्पति के अर्जन व स्वामित्व का अधिकार
(द) उस सम्पति का विधि के अनुसार संचालन करने का अधिकार।

- **राजकीय संस्थाओं में धार्मिक शिक्षण पर रोक (अनुच्छेद 28)** – इस अनुच्छेद के अनुसार राज्य की निधि से किसी भी शिक्षण संस्था में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं की जावेगी। इसके साथ ही राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त या आर्थिक सहायता प्राप्त शिक्षण संस्था में किसी व्यक्ति को धर्म विशेष की शिक्षा लेने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकेगा।

5. सांस्कृतिक व शिक्षा सम्बन्धी अधिकार (अनुच्छेद 29 व 30) (Cultural & Educational Rights)

- **अल्पसंख्यक वर्गों के हितों की सुरक्षा (अनुच्छेद 29)** – इस अनुच्छेद के अनुसार देश के सभी नागरिकों को संस्कृति व शिक्षा सम्बन्धी स्वतन्त्रता का अधिकार दिया गया है। नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को अपनी भाषा, लिपि व संस्कृति को सुरक्षित रखने का पूरा अधिकार है। इस तरह राज्य द्वारा संचालित शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के लिए जाति, वर्ग के आधार पर कोई विभेद नहीं किया जायेगा।
- **अल्पसंख्यक वर्ग को शिक्षा संस्थाओं की स्थापना व संचालन का अधिकार (अनुच्छेद 30)** – इस अनुच्छेद के अनुसार अल्पसंख्यक वर्ग को अपनी इच्छानुसार शिक्षण संस्थान की स्थापना व उनके संचालन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त है। राज्य द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान करते समय किसी भी ऐसी संस्था के साथ धर्म, जाति के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा।

6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32) (Right fo Constitutional Remedies)

– यद्यपि संविधान में मूल अधिकार प्रदान किये गये हैं किन्तु यदि इनकी उचित क्रियान्वति की व्यवस्था न की जाए तो इनका कोई अर्थ नहीं रहेगा। संविधान निर्माताओं ने इसी तथ्य को मध्यनजर रखते हुए संवैधानिक उपचारों का अधिकार दिया है। इसका अभिप्राय यह है कि नागरिक अधिकारों को लागू कराने के लिए न्यायपालिका की शरण ले सकता है।

डां. अम्बेडकर ने तो अनुच्छेद 32 का महत्त्व स्पष्ट करते हुए कहा था कि यदि मुझसे कोई यह पूछे कि संविधान का वह कौनसा अनुच्छेद है जिसके बिना संविधान शून्य प्रायः हो जायेगा तो मैं इस अनुच्छेद को छोड़कर किसी और अनुच्छेद की ओर संकेत नहीं कर सकता। यह तो संविधान की हदय व आत्मा है। सर्वोच्च व उच्च न्यायालय द्वारा मूल अधिकारों की रक्षा के लिए निम्न पांच प्रकार के लेख जारी किये जा सकते हैं।

1. **बन्दी प्रत्यक्षीकरण लेख (Habeas corpus)** – यह उस व्यक्ति की प्रार्थना पर जारी किया जाता है जो यह समझता है कि उसे अवैध रूप से बन्दी बनाया गया है। इसके द्वारा न्यायालय सम्बन्धित अधिकारी को यह आदेश देते है कि बन्दी बनाये गये व्यक्ति को निश्चित समय व निश्चित स्थान पर निश्चित प्रयोजन के लिए उपस्थित करे जिससे न्यायालय यह जान सके कि उसे वैध रूप से बन्दी बनाया गया है या अवैध। अगर बन्दी बनाने का कारण अवैध होता है तो न्यायालय तत्काल इसे मुक्त करने की आज्ञा देता है।
2. **परमादेश (Mandamus)** – इस आदेश द्वारा न्यायालय उस पदाधिकारी को अपने कर्त्तव्य निर्वहन के लिए आदेश जारी कर सकता है जो पदाधिकारी अपने कर्त्तव्य का समुचित पालन नहीं कर रहे हैं।
3. **प्रतिषेध लेख (Prohibition)**– यह आलेख सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा अपने अधीनस्थ न्यायालयों को जारी करते हुए निर्देश दिया जाता है कि इस मामले में कार्यवाही नहीं करें क्योंकि यह उनके क्षेत्राधिकार से बाहर है।
4. **उत्प्रेषण लेख (Certiorari)**– इस आज्ञा पत्र का उपयोग किसी भी विवाद को निम्न न्यायालय से उच्च न्यायालय में भेजने के लिए जारी किया जाता है। जिससे कि वह अपने शक्ति से अधिक अधिकारों का प्रयोग न करे और न्याय के प्राकृतिक सिद्वान्त की पालना

की जा सके।

5. **अधिकार पृच्छा (Quowarranto)**– जब कोई व्यक्ति गैर कानूनी तौर पर किसी सरकारी या अर्द्व सरकारी या निर्वाचित पद को संभालने का प्रयास करे तो उसे ऐसा आदेश जारी किया जा सकता है कि वह किस आधार पर इस पद पर कार्य कर रहा है? जब तक वह संतोषजनक उत्तर नहीं देता तब तक वह कार्य नहीं कर सकता। न्यायालय उस पद को रिक्त घोषित कर सकता है।

2.4 मूल अधिकारों का मूल्यांकन (Appreciation of Fundamental Rights) –

भारतीय संविधान में प्रदत्त मूल अधिकारों की आलोचना निम्न आधारों पर की गई है–

1. मूल अधिकारों में इतने प्रतिबंध लगा दिये गये है कि इनके बारे में कहा जाता है कि संविधान द्वारा एक हाथ से मूल अधिकार प्रदान किये गये व दूसरे हाथ से ले लिये गये।
2. आपातकाल के समय मूल अधिकार स्थगित किया जाना न्यायोचित है लेकिन शान्ति काल में भी मूल अधिकारों पर स्थगन किया जाना इनके अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगा देता है। विशेष रूप से सामान्य परिस्थितियों में भी निवारक नजरबन्दी की जो व्यवस्था की गई है वह कटु आलोचना का विषय रही है। हरिविष्णु कामथ ने इन व्यवस्थाओं का विरोध करते हुए संविधान सभा में कहा था "इस व्यवस्था द्वारा हम तानाशाही राज्य की और पुलिस राज्य की स्थापना कर रहे हैं।"
3. मूल अधिकार भारतीय नागरिकों को व्यवस्थापिका की निरंकुशता से सुरक्षा प्रदान करने में समर्थ नहीं हैं। संसद तथा विधानसभा द्वारा बनाये गये कानून वैध हैं चाहे वे नागरिक हितों के प्रतिकूल ही क्यों न हों।
4. मौलिक अधिकारों पर प्रतिबन्धों की व्यवस्था संविधान में राष्ट्र व समाज विरोधी गतिविधियों को रोकने के लिए की गई है। व्यावहारिक दृष्टि से इनका प्रयोग राजनीतिक विरोधियों के स्वर को दबाने के लिये भी किया गया है।
5. मूल अधिकारों के अन्तर्गत भारतीय संविधान में अल्पसंख्यकों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लिये विशेष संरक्षण की व्यवस्था की गई है किन्तु इसका प्रयोग वोटों की राजनीति के लिए हुआ है।
6. शोषण के विरुद्धअधिकार यद्यपि स्त्रियों, बच्चों गरीब कामगारों के हितों की रक्षा के लिए बनाया गया है। किन्तु अशिक्षा, बेरोजगारी,गरीबी के कारण इन वर्गो का शोषण व्यवहारिक रूप से नहीं रोका जा सका है।
7. मौलिक अधिकारों को न्यायिक सुरक्षा देने के बावजूद वर्तमान न्यायिक प्रक्रिया लम्बी, जटिल व खर्चीली होने से आम नागरिक के हितों की रक्षा में सफल नहीं हो पा रही है।

उपरोक्त आलोचनाओं के बावजूद मौलिक अधिकारों का महत्त्व कम नहीं हुआ है क्योंकि राष्ट्र की सुरक्षा व्यक्ति की सुरक्षा से अधिक मूल्यवान है। मूल अधिकारों के अतिक्रमण की परिस्थिति अल्पकालिक ही होती है।

2.5 नीति निर्देशक तत्व (Directive Principles of State Policy)

हमारे संविधान की एक प्रमुख विशेषता नीति निर्देशक तत्व हैं जिन्हें संविधान निर्माताओं ने आयरलैण्ड के संविधान से लिया है। राज्य के नीति निर्देशक तत्व वे विचार हैं जिन्हे संविधान निर्माताओं ने भविष्य में बनने वाली सरकारों के समक्ष एक पथ प्रदर्शक के रूप में रखा है। डा. राजेन्द्र प्रसाद के शब्दो में "राज्य नीति निर्देशक सिद्वांतों का उद्देश्य जनता के कल्याण को प्रोत्साहित करने वाली सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना है।'' नीति निर्देशक तत्व राज्य की कार्यपालिका व व्यवस्थापिका के समक्ष आचार संहिता के रूप में हैं। देश की मौलिक अधिकार परामर्शदात्री समिति ने यह स्वीकारा था कि इन्हे प्रशासन संचालन हेतु मूलभूत सिद्वांत माना जाए।

संविधान के अनुच्छेद 37 में कहा गया है कि इस भाग में दिये उपबन्धों को किसी भी न्यायालय द्वारा बाध्यता नहीं दी जा सकेगी तब भी इसमें दिये हुए तत्व देश के शासन में मूलभूत हैं और विधि निर्माण में इन तत्वों का प्रयोग करना राज्य का कर्त्तव्य होगा। एल जी खेडेकर के अनुसार" नीति निर्देशक तत्व वे आदर्श हैं जिनकी क्रियान्वति का प्रयत्न शासन को करना है।'' संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 से 51 तक राज्य के नीति निर्देशक तत्वों का उल्लेख किया गया है।

2.6 राज्य के नीति निर्देशक तत्त्व (Directive Principles of State Policy)

लोक कल्याणकारी राज्य की कल्पना को साकार रूप देने, समता पर आधारित समाज का निर्माण करने, विकास हेतु सभी को सामान अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से संविधान में राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों का उल्लेख किया गया है।

संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 से 51 तक राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों की परिभाषा सहित अन्य प्रावधानों की व्यवस्था की गई है। ये नीति निर्देशक तत्त्व नागरिकों की शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक समता तथा राज्य के लिये अनुसरणीय नीति के विश्लेषण से सम्बन्धित हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इन सिद्वान्तों अथवा तत्त्वों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है :

(क) आर्थिक सुरक्षा सम्बन्धी निर्देशक तत्त्व (Directive Principles and Economic Security) :

संविधान निर्माताओं का उद्देश्य भारत में एक लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना था। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु संविधान में अनेक निर्देशक तत्त्वों की व्यवस्था की गयी है। ये तत्त्व निम्नलिखित हैं :

1. संविधान के अनुच्छेद 39 के अनुसार राज्य अपनी नीति इस प्रकार निर्धारित करेगा जिससे कि :

- पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;
- समुदाय के भौतिक साधनों का स्वामित्व और वितरण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;
- सम्पत्ति और उत्पादन के साधनों का इस प्रकार केन्द्रीकरण न हो कि सार्वजनिक हित को किसी प्रकार की बाधा पहुँचे;
- स्त्री और पुरुष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले;
- श्रमिक पुरुषों और स्त्रियों के स्वास्थ्य तथा शक्ति एवं बालकों की सुकुमार अवस्था का आर्थिक दुरूपयोग न हो;
- राज्य के द्वारा बच्चों के स्वस्थ रूप से विकास के लिए अवसर और सुविधाएँ प्रदान की जायेगी, उन्हें स्वतन्त्रता और सम्मान की स्थिति प्राप्त होगी तथा बच्चों और युवकों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जायेगी।

2. अनुच्छेद 41 में कहा गया है कि राज्य अपने विकास और आर्थिक सामर्थ्य की सीमाओं के अन्तर्गत इस बात का प्रयास करेगा कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्तानुसार रोजगार पा सके, शिक्षा प्राप्त कर सके एवं बेकारी, वृद्धावस्था, बीमारी तथा अंगहीन होने की दशा में सार्वजनिक सहायता प्राप्त कर सके।
3. अनुच्छेद 42 में कहा गया है कि राज्य काम के लिए यथोचित और मानवोचित दशाओं का प्रबन्ध करेगा तथा ऐसी व्यवस्था करेगा जिससे स्त्रियों को प्रसूतावस्था में कार्य न करना पड़े।
4. अनुच्छेद 43 में कहा गया है कि राज्य कानून द्वारा अथवा आर्थिक संगठनों द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकार से ऐसी व्यवस्था करेगा जिससे कृषि, उद्योगों अथवा अन्य क्षेत्रों में लगे हुए सभी श्रमिकों को अपने जीवन निर्वाह के लिये यथोचित वेतन मिल सके, उनका जीवन–स्तर ऊँचा उठ सके, वे अपने अवकाश के समय का पूरा उपयोग कर सकें तथा उन्हें सामाजिक और सांस्कृतिक उत्रति के लिए सुअवसर प्राप्त हो सकें।
5. इसी अनुच्छेद में यह भी कहा गया है कि राज्य ग्रामीण क्षेत्रों में व्यक्तिगत अथवा सहकारी आधार पर कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देने का प्रयत्न करेगा।

   42 वें संविधान संशोधन द्वारा आर्थिक सुरक्षा सम्बन्धी निर्देशक तत्त्वों में दो तत्त्व और जोड़ दिये गये है

- कमजोर वर्गों के लिये निःशुल्क कानूनी सहायता
- औद्योगिक संस्थाओं के प्रबन्धन में कर्मचारियों की भागीदारी बनाने की व्यवस्था।

6. नवीन अनुच्छेद 43क के अनुसार राज्य उचित व्यवस्थापन अथवा अन्य किसी प्रकार से औद्योगिक संस्थानों अथवा अन्य ऐसे ही संगठनों के प्रबन्ध में श्रमिकों को भागीदार बनाने के लिए कदम उठायेगा।
7. अनुच्छेद 48 के अनुसार राज्य कृषि एवं पशुपालन का आधुनिक तथा वैज्ञानिक ढंग से संचालन करेगा एवं गाय, बछड़ों तथा अन्य दूध देने वाले व भार ढोने वाले पशुओं की नस्ल सुधारने और उनके वध को रोकने का प्रयत्न करेगा।
8. 44वें संविधान संशोधन (अप्रेल 1979) द्वारा एक और तत्त्व जोड़ा गया कि राज्य विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए व्यक्तियों के समुदायों के बीच विद्यमान आय, सामाजिक स्तर, सुविधाओं और अवसरों सम्बन्धी भेदभाव को भी कम से कम करने का प्रयत्न करेगा।

(ख) **सामाजिक सुरक्षा और शिक्षा सम्बन्धी निर्देशक तत्त्व (Directive Principles, Social Security and Education) :** लोगों के सामाजिक तथा शैक्षिक स्तर को ऊँचा उठाने की दृष्टि से भी संविधान में कुछ निर्देशक तत्त्वों का वर्णन किया गया है,

1. अनुच्छेद 44 के अनुसार राज्य देश के सभी नागरिकों के लिए एक समान आचार–संहिता बनाने का प्रयत्न करेगा।
2. अनुच्छेद 45 के अनुसार राज्य संविधान लागू होने के 10 वर्ष के अन्दर 14 वर्ष की आयु तक के बालकों के लिए निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था करेगा।
3. अनुच्छेद 46 के अनुसार राज्य जनता के पिछड़े हुए वर्गों– विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा तथा आर्थिक हितों की उन्नति के लिए विशेष प्रयत्न करेगा और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करेगा।
4. अनुच्छेद 47 के अनुसार राज्य का यह प्रमुख कर्त्तव्य होगा कि वह लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य के विकास के लिए प्रयत्न करे। राज्य औषधि में प्रयोग किये जाने के अतिरिक्त ऐसे मादक द्रव्यों व पदार्थो के सेवन पर प्रतिबन्ध लगायेगा जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।
5. 42वें संविधान संशोधन में एक नवीन अनुच्छेद 48क और जोड़ा गया है जिसमें कहा गया है कि राज्य पर्यावरण की रक्षा और उसमें सुधार करने तथा देश के वन्य जीव और वनों की सुरक्षा के लिए प्रयत्न करेगा।

(ग) **पंचायतीराज, प्राचीन स्मारक तथा न्याय संबंधी निर्देशक तत्त्व (Panchayatiraj, Ancient Heritage Sites, Justice and Directive Principles):** देश के पंचायती राज के विकास, प्राचीन स्मारकों की रक्षा तथा न्याय की प्राप्ति के उदे्श्य से भी संविधान में कुछ निर्देशक तत्त्वों का वर्णन किया गया है, जो इस प्रकार हैः–

1. अनुच्छेद 40 के अनुसार राज्य, ग्राम पंचायतों के गठन के लिए प्रयत्न करेगा और उनको ऐसी शक्तियाँ तथा अधिकार प्रदान करेगा जिससे कि वे स्वायत्त शासन की

इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें।

2. अनुच्छेद 49 में कहा गया है कि राज्य का यह दायित्व होगा कि वह प्रत्येक स्मारक अथवा स्थान, कलात्मक अथवा ऐतिहासिक रूचि की वस्तुओं की जिन्हें संसद ने राष्ट्रीय महत्त्व का घोषित कर दिया हो, रक्षा करे और उन्हें नष्ट होने, कुरूप बनाने अथवा उनका निर्यात करने से रोकने का प्रयत्न करे।
3. अनुच्छेद 50 में कहा गया है कि राज्य न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने का प्रयत्न करेगा। इसका उद्देश्य न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को सुरक्षित करना है।

(घ) **अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा सम्बन्धी निर्देशक तत्व (International Peace and Security and Directive Principles) :** अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की दृष्टि से संविधान के अनुच्छेद 51 में जिन निर्देशक तत्वों को अपनाया गया है, वे इस प्रकार हैं :

1. राज्य अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की वृद्धि के लिए प्रयत्न करेगा।
2. राज्य संसार के विभिन्न राष्ट्रों के मध्य न्यायपूर्ण व सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाये रखने का प्रयत्न करेगा।
3. राज्य, राष्ट्रों के आपसी व्यवहार में अन्तर्राष्ट्रीय कानून और सन्धियों के प्रति आदर की भावना बढ़ाने का प्रयत्न करेगा।
4. राज्य अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को मध्यस्थता द्वारा सुलझाने के लिए प्रोत्साहन देगा।

निर्देशक तत्वों के उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन सिद्धान्तों के आधार पर भारत में वास्तविक लोकतन्त्र की स्थापना हो सकेगी। इन सिद्धान्तों के कार्यान्वयन से भारत, संविधान की प्रस्तावना के अनुरूप एक कल्याणकारी राज्य बन सकेगा।

नीति निर्देशक तत्वों का महत्व (Importance of Directive Principles) :–

संवैधानिक और व्यवहारिक दृष्टिकोण से नीति निर्देशक तत्व अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन तत्वों के महत्व का अध्ययन निम्नलिखित रूपों में किया जा सकता है।

1. **शासन के लिए आचार संहिता :–** यद्यपि इन निर्देशक तत्वों को न्यायालय द्वारा क्रियान्वित नहीं किया जा सकता किन्तु इनके पीछे जनमत की शक्ति होती है जो प्रजातन्त्र का सबसे बड़ा न्यायालय है। अतः जनता के प्रति उत्तरदायी कोई भी सरकार इनकी अवहेलना का साहस नहीं कर सकती।
2. **लोक कल्याणकारी राज्य की रूप रेखा :–** डा. अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि संविधान का उद्देश्य केवल राजनीतिक लोकतंत्र की व्यवस्था करना ही नहीं है बल्कि ऐसे कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है जिसमें आर्थिक व सामाजिक लोकतंत्र का भी समावेश हो। ये सिद्धांत इस आदर्श की पूर्ति करते हैं।
3. **शासन के मूल्यांकन का आधार :–** नीति निर्देशक तत्व जनता द्वारा शासन की सफलता या असफलता जांचने के मानदण्ड हैं। इनके द्वारा सरकारों के विभिन्न कार्यों का मूल्यांकन किया जा सकता है।
4. **संविधान के क्रियान्वयन में सहायक :–** नीति निर्देशक तत्व देश के शासन में मूलभूत है जिसका तात्पर्य यह है कि देश के प्रशासन के लिए उत्तरदायी सभी सत्तायें इनके द्वारा निर्देशित होंगी। न्यायपालिका भी शासन का एक महत्वपूर्ण अंग होने के कारण यह आशा की जाती है कि भारत में न्यायालय संविधान की व्यवस्था के कार्य में नीति निर्देशक तत्वों को उचित महत्व देंगे।
5. **सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन में सहायक :–** भारतीय संविधान निर्माताओं का उद्देश्य भारत में एक लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना था। इस हेतु आर्थिक सुरक्षा व आर्थिक न्याय प्रदान करने हेतु राज्य के प्रत्येक स्त्री, पुरुष को जीविका के साधन उपलब्ध कराना, सम्पति का केन्द्रीयकरण रोकना, स्त्री, बाल श्रमिकों को शोषण से सुरक्षा प्रदान करना आदि समता मूलक समाज स्थापना में सहायक सिद्ध हुए हैं। इसी तरह लोगों के जीवन स्तर सुधार हेतु चिकित्सा, शिक्षा, रोजगार उपलब्ध कराने में नीति निर्देशक तत्वों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

2.7 नीति निर्देशक तत्वों के क्रियान्वयन के कुछ महत्वपूर्ण उदाहरण (Some Exampls of Implementation of Directive Principles) –

1. **भूमि सुधार** – आजादी से पूर्व किसान जमींदारी व जागीरदारी प्रथा के शोषण का शिकार थे। किन्तु संविधान की नौंवी अनुसूची में 1951 में भूमि सुधारों के अन्तर्गत भूमि पर जोतने वाले का अधिकार लागू करने से किसानों को सुरक्षा प्राप्त हुई है।
2. **पंचायती राज और स्थानीय स्वशासन** – नीति निर्देशक तत्वों में ग्राम पंचायतों की स्थापना और उन्हें स्वायत्त शासन की इकाईयाँ का रूप देने की बात की गई है। 2 अक्टूबर 1959 से पंचायती राज की व्यवस्था में लागू की गई। 1993 में 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के आधार पर पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा दिया गया। इसी तरह 74 वें संविधान संशोधन में शहरी क्षेत्र में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था को सुदृढ़ करने का प्रयास किया गया है।
3. **पंचवर्षीय योजनाएं** :– देश के आर्थिक विकास के लिए नियोजन की प्रक्रिया को अपनाया गया। इस आधार पर योजना आयोग का गठन कर आर्थिक विकास का ढांचा तैयार किया गया। अब तक 11 पंचवर्षीय योजनाएं लागू की जा चुकी हैं। वर्तमान पंचवर्षीय योजना एक अप्रेल 2012 से संचालित की जा रही है।

इन योजनाओं में कृषि, जलसंधान पशु नस्ल सुधार, ऊर्जा, उद्योग, परिवहन, श्रम, आवास सुरक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान, शिक्षा आदि के सम्बन्ध में विभिन्न कार्यक्रम तैयार कर क्रियान्वयन निरन्तर जारी है।

4. **कमजोर वर्गों का कल्याण** :– अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों व पिछड़े वर्ग के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए संविधान व शासन में विशेष प्रावधान किये गये हैं। प्रतिनिधि संस्थाओं में इनके लिए आरक्षण की अवधि 95वें संवैधानिक संशोधन द्वारा 25 जनवरी 2020 तक के लिए बढा दी गई है। अस्पृश्यता निवारण के लिए कठोर कानून बनाये गये हैं। इनके शैक्षिक स्तर उन्नयन के लिए निःशुल्क शिक्षा, छात्रवृतियां आदि की व्यवस्था की गई है। 65वें संविधान संशोधन अधिनियम के आधार पर 7 सदस्यीय ''अनुसूचित जाति व जनजाति आयोग'' की स्थापना कर इसे संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। यह आयोग इस वर्ग के शोषण सम्बन्धी घटनाओं की जांच कर सकेगा। महिला सशक्तिकरण के लिए 73वें व 74 संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं व शहरी क्षेत्र की स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत स्थान आरक्षित किये गये हैं।
5. **सामाजिक सुरक्षा** :– नागरिकों के सामाजिक उत्थान के लिए वृद्धावस्था पेंशन योजना, स्वास्थ्य बीमा योजना, महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी अधिनियम 2005 आदि कार्यक्रम राष्ट्रीय स्तर पर संचालित किये जा रहे हैं।
6. **बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण** :– आर्थिक समानता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जीवन बीमा, परिवहन, कोयला, खान, पर्यटन आदि के साथ साथ प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया जा चुका है।
7. **न्यायिक व्यवस्था में सुधार** :– सस्ता व शीघ्र न्याय सुलभ कराने के लिए लोक अदालतों व त्वरित न्यायालयों की व्यवस्था को अपनाया गया है।
8. **अनिवार्य व निशुल्क प्राथमिक शिक्षा का अधिकार** :– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की मात्र 14 प्रतिशत आबादी शिक्षित थी। हमारी सरकारों ने शिक्षा के महत्व को समझते हुए लोगों तक शिक्षा पहुंचाने पर जोर दिया। इसी के अन्तर्गत 86 वें संविधान संशोधन के आधार पर प्रारंभिक शिक्षा के अन्तर्गत 6 से 14 वर्ष के प्रत्येक बालक के लिए अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा के अधिकार का प्रावधान किया गया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सर्व शिक्षा अभियान, मिड डे मील आदि कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं।
9. **सम्पति के अधिकार से सम्बन्धित व्यवस्था में परिवर्तन** :– आर्थिक व सामाजिक न्याय के मार्ग में बाधित मानते हुए सम्पति के अधिकार को 44वें संविधान संशोधन के द्वारा मूल अधिकारों की सूची से हटा कर कानूनी अधिकार बना दिया गया है।
10. **समान कार्य हेतु समान वेतन** :– वर्ग,जाति, लिंग के आधार पर आजीविका में भेदभाव दूर करते हुए स्त्री पुरुषों को समान कार्य के लिए समान वेतन का प्रावधान किया गया है। केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा किये गये ये कार्य यह दर्शाते हैं कि भारत में एक पंथ निरपेक्ष समाजवादी व लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए इन नीति निर्देशक तत्वों को लागू किया गया है।

2.8 मूल अधिकार व नीति निर्देशक तत्व (Fundamental Rights and Directive Principles)

मूल अधिकार व नीति निर्देशक तत्त्व दोनों ही नागरिकों के कल्याण तथा विकास से सम्बन्धित हैं तथा नागरिकों का जीवन श्रेष्ठ बनाने के लिए प्रतिबद्ध हैं, फिर भी दोनों में अन्तर है :

1. मौलिक अधिकार वाद योग्य हैं लेकिन निर्देशक तत्त्व वाद योग्य नहीं हैं।
2. मौलिक अधिकार नागरिकों के कानूनी अधिकार हैं लेकिन निर्देशक तत्त्व समाज के नैतिक बन्धन हैं।
3. मौलिक अधिकार व्यक्ति के व्यक्तिगत अधिकार हैं लेकिन निर्देशक तत्त्व राज्य की नीतियों के निर्धारण में पथ प्रदर्शक हैं।
4. मौलिक अधिकार राजनीतिक लोकतन्त्र के प्रतीक हैं लेकिन निर्देशक तत्त्व सामाजिक व आर्थिक लोकतन्त्र के प्रतीक हैं।

2.9 मूल अधिकारों व राज्य नीति के निर्देशक तत्त्वों में सम्बन्ध (Relations between Fundamental Rights and Directive Principles)

संविधान के भाग तीन में मूल अधिकार और भाग चार में राज्य के नीति निर्देशक तत्त्व वर्णित हैं। संविधान निर्माताओं ने इन दोनों भागों को एक दूसरे का पूरक माना है। ये सम्मिलित रूप से कल्याणकारी लोकतांत्रिक राज्य के निर्माण की योजना प्रस्तुत करते हैं। न्यायाधीश गजेन्द्र गड़कर का मत था कि दोनों भागों में यदि गतिरोध हो तो न्यायालय को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे दोनों में सामंजस्य स्थापित हो जाए। सन् 1967 में गोलकनाथ वाले मामले में न्यायपालिका ने अधिकारों को सर्वोच्च एवं संसद द्वारा असंशोधनीय घोषित कर दिया था। सन् 1973 में केशवानन्द भारती वाले वाद में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह घोषित किया गया कि संसद द्वारा संविधान के किसी भी भाग में परिवर्तन या संशोधन तो किया जा सकता है, किन्तु संविधान के 'मूल ढांचे' में कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता। 42वें संविधान संशोधन द्वारा नीति निर्देशक तत्त्वों को मूल अधिकारों पर वरीयता दी गई थी किन्तु बाद में मिनर्वा मिल्स वाले वाद में उच्चतम न्यायालय ने मूल अधिकारों पर नीति निर्देशक तत्त्वों की सर्वोच्चता को समाप्त कर यह स्पष्ट कर

दिया कि संविधान में संशोधन करने की संसद की शक्ति असीमित नहीं है। वह मूल ढांचे का उल्लंघन नहीं कर सकती है। वर्तमान में न्यायपालिका द्वारा मूल अधिकारों की व्याख्या नीति निर्देशक तत्त्वों के सन्दर्भ में की जा रही है क्योंकि मूल अधिकार एवं नीति निर्देशक तत्त्व एक दूसरे के विरोधी नहीं पूरक हैं।

मूल कर्त्तव्य (Fundamental Duties)

मूल अधिकार व कर्त्तव्य में विशिष्ट सम्बन्ध है। अधिकार व कर्त्तव्य एक दूसरे के पूरक हैं एक व्यक्ति के कर्त्तव्य दूसरे व्यक्ति के अधिकार बन जाते हैं। अतः कर्त्तव्यों की अनुपस्थिति में अधिकारों की कल्पना ही संभव नहीं। संविधान में 1950 में भारतीय नागरिकों के लिए सिर्फ मूल अधिकारों का ही उल्लेख किया गया था, मूल कर्त्तव्यों का नहीं। लेकिन 1976 में 42 वां संविधान संशोधन करते हुए यह अनुभव किया गया कि नागरिकों के मूल कर्त्तव्यों का उल्लेख किया जाना चाहिए। अतः संविधान के भाग 'चार क' में 10 कर्त्तव्यों को जोड़ा गया। इसमें उल्लेख किया गया कि भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य होगा कि वह –

1. संविधान का पालन करे तथा उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज तथा राष्ट्रगान का आदर करे।
2. स्वतन्त्रता के लिये हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हदय में संजोये रखे व उनका पालन करे।
3. भारत की प्रभुता, एकता व अखण्डता को अक्षुण्ण रखे।
4. देश की रक्षा करे और आह्वान किये जाने पर राष्ट्र की सेवा करे।
5. भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा, प्रदेश या वर्ग पर आधारित भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हो।
6. हमारी समन्वित संस्कृति की गौरवशाली परम्परा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे।
7. प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अन्तर्गत वन,झील, नदी व वन्य जीव है, की रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणी मात्र के प्रति दयाभाव रखे।
8. वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे।
9. सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे।
10. व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्र में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरन्तर बढ़ते हुये प्रगति व उत्कर्ष की नई ऊँचाइयों को छू ले।
11. 86 वें संवैधानिक, संशोधन (2002) के आधार पर अनुच्छेद 51(क) को संशोधित करते हुए 11वां मूल कर्त्तव्य जोड़ा गया है कि ''माता पिता या संरक्षक का कर्त्तव्य होगा कि वे 6 से 14 वर्ष के अपने बच्चों को शिक्षा के लिए अवसर प्रदान करें।''

2.10 मूल कर्त्तव्यों की आलोचना (Criticism of Fundamental Duties)

1. कर्त्तव्यों के उल्लंघन पर दण्ड की व्यवस्था नहीं की गई है – मूल कर्त्तव्यों के उल्लंघन पर हमारे संविधान में किसी तरह की कोई दण्ड की व्यवस्था नहीं की गई है। इससे इनकी पालना भी भली भांति नहीं हो पा रही है।
2. अत्यधिक आदर्शवादी – मूल कर्त्तव्य अत्यधिक आदर्शवादी विचारों से प्रेरित हैं जैसे राष्ट्रीय आदर्शों की पालना, देश की समन्वित संस्कृति व गौरवशाली परम्परा की रक्षा करना, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद ऐसे ही आदर्श है जो प्राय व्यवहार में काम नहीं लिये जा रहे हैं।

यह सर्व मान्य तथ्य है कि कर्त्तव्यों की पालना किये बिना अधिकारों का उपयोग संभव नहीं। ये हमारे नागरिकों के लिए आदर्श के रूप में जोड़े गये हैं। ये राष्ट्रहित व राष्ट्रप्रेम की भावना जागृत करने वाले हैं। संविधान में इनको सम्मिलित करने के पीछे कोई राजनीतिक या दलगत भावना नहीं थी। ऐसा माना जा रहा है कि नागरिक चेतना के विकास के साथ साथ नागरिक भविष्य में इन कर्त्तव्यों को धीरे धीरे पालन करने में अभ्यस्त हो जाएँगे। प्रत्येक नागरिक द्वारा इन कर्त्तव्यों का पालन करना सर्वोच्च धर्म समझा जाना चाहिए।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- मूल अधिकार वे अधिकार हैं जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक होने के कारण संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदान किये गये हैं।
- मूल अधिकार का महत्त्व – प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करना, शासन की स्वेच्छा चारिता पर रोक, न्यायिक सुरक्षा लोकतंत्र के आधार स्तम्भ, समानता के कारक आदि।
- भारतीय संविधान के भाग 3 में मूल अधिकारों के सम्बन्ध में कुल 23 अनुच्छेद दिये गये हैं। अनुच्छेद 12 से 30 व 32 से 35 तक मूल अधिकारों का उल्लेख है।
- मूल संविधान में 07 मूल अधिकार थे किन्तु 44वें संविधान संशोधन द्वारा सम्पति का अधिकार इस सूची से हटा दिया गया। अब छः मूल अधिकार हैं– समानता का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार, संस्कृति एवं शिक्षा अधिकार, संवैधानिक उपचारों का अधिकार।

मौलिक अधिकारों की आलोचना –

मौलिक अधिकारों पर अत्यधिक प्रतिबन्ध लगे हैं, शांति काल में भी इन पर प्रतिबंध लगाना, व्यवस्थापिका का कानून मानने की बाध्यता, राजनीतिक विरोधियों को दबाने मे इनका उपयोग, शोषण के विरुद्ध प्रभावी नहीं, न्यायिक प्रक्रिया की बाधा।

- नीति निर्देशक तत्व वे विचार हैं जिन्हे संविधान निर्मातांओं

ने भविष्य में बनने वाली सरकारों के समक्ष एक पथ प्रदर्शक के रूप में रखा है।

- संविधान के भाग 4 में अचुन्छेद 36 से 51 तक राज्य के नीति निर्देशक तत्वों की परिभाषा व इसके प्रावधानों की व्यवस्था की गई है।
- **नीति निर्देशक तत्वों को चार वर्गों में विभक्त कर अध्ययन किया जाता है**–

अ. आर्थिक सुरक्षा सम्बन्धी निर्देशक तत्व

ब. सामाजिक हित और शिक्षा सम्बन्धी नीति निर्देशक तत्व

स. पंचायती राज, प्राचीन स्मारकों तथा न्याय सम्बन्धी नीति निर्देशक तत्व

दृ अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा सम्बन्धी सिद्धांत।

- **नीति निर्देशक तत्वों का महत्व**–

अ. शासन हेतु आचार संहिता

ब. लोक कल्याणकारी राज्य की रूप रेखा

स. शासन के मूल्यांकन का आधार

दृ संविधान की व्याख्या में सहायक

य. सामाजिक आर्थिक परिवर्तन में सहायक

- नीति निर्देशक तत्वों के क्रियान्वयन हेतु सरकार द्वारा विभिन्न कार्य किये जा रहे हैं जैसे– भूमि सुधार, पंचायती राज शासन को सुदृढ़ करना, पंचवर्षीय योजना, निर्माण, कमजोर वर्गों के कल्याण हेतु योजनाएं, सामाजिक सुरक्षा, बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, न्यायिक व्यवस्था में सुधार, अनिवार्य व निशुल्क शिक्षा का अधिकार, सम्पति के अधिकार व्यवस्था में परिवर्तन, समान कार्य हेतु समान वेतन आदि।
- संविधान में 42 वें संशोधन 1976 में चतुर्थ भाग में चतुर्थ 'क' जोड़ा गया है इसमें 11 मूल कर्त्तव्य की व्यवस्था की गई है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. भारत के संविधान के किस भाग में मूल अधिकारों का उल्लेख किया गया है?
   (अ) भाग एक (ब) भाग दो
   (स) भाग तीन (द) भाग चार ( )
2. जब किसी व्यक्ति को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया जाता है तो कितने समय के अन्दर निकटतम न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत करना होगा?
   (अ) 12 घण्टे (ब) 24 घण्टे
   (स) 36 घण्टे (द) 48 घण्टे ( )
3. नीति निर्देशक तत्व किस देश के संविधान से लिये गये हैं?
   (अ) यू.एस.ए. (ब) इग्लैंड
   (स) आयरलैण्ड (द) आस्ट्रेलिया ( )
4. नीति निर्देशक तत्व का उल्लेख संविधान के किस भाग में किया गया हैं?
   (अ) पहले (ब) दूसरे
   (स) तीसरे (द) चौथे ( )
5. ''पुरुष व स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका उपार्जन का अधिकार है।'' यह निम्न में से किस प्रकार का नीति निर्देशक तत्व है–
   (अ) सामाजिक हित व शिक्षा सम्बन्धी
   (ब) आर्थिक सुरक्षा सम्बन्धी
   (स) न्याय सम्बन्धी
   (द) इनमें से कोई नहीं ( )
6. किस संविधान संशोधन द्वारा मूल कर्त्तव्यों को संविधान के साथ जोड़ा गया है?
   (अ) 44 वें संशोधन (ब) 42 वें संशोधन
   (स) 41 वें संशोधन (द) 45 वें संशोधन ( )
7. वर्तमान में भारतीय संविधान में कितने मूल अधिकार है?
   (अ) 05 (ब) 06
   (स) 07 (द) 08 ( )
8. जब न्यायालय किसी पदाधिकारी को उसके कर्त्तव्य निर्वहन के लिए आदेश जारी करता है तो इसे कहते हैं–
   (अ) परमादेश (ब) प्रतिषेध लेख
   (स) उत्प्रेषण आदेश (द) अधिकार पृच्छा ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. संविधान के किन अनुच्छेदों में मूल अधिकारों का उल्लेख है?
2. स्वतंत्रता का अधिकार किस अनुच्छेद से सम्बन्धित है?
3. नीति निर्देशक तत्वों का महत्व स्पष्ट कीजिए।
4. नीति निर्देशक तत्वों की पालना में सरकार द्वारा शिक्षा सम्बन्धी संचालित विभिन्न योजनाओं का उल्लेख कीजिए।
5. संविधान के किस भाग में मूल कर्त्तव्य जोड़े गये हैं?
6. संविधान में अनुच्छेद 14 से 18 किस मौलिक अधिकार से सम्बन्धित है?
7. शोषण के विरुद्ध अधिकार किस अनुच्छेद से सम्बन्धित है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. मूल अधिकारों से क्या अभिप्राय है?
2. मूल अधिकारों में धार्मिक स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में क्या प्रावधान किये गये हैं?
3. निवारक नजरबन्दी पर टिप्पणी लिखें।
4. राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम की उपादेयता स्पष्ट कीजिए।
5. भारतीय संविधान में दिये गये कोई 5 मूल कर्त्तव्य लिखिये।
6. समानता के अधिकार हेतु संविधान में दिये गये प्रावधानों का उल्लेख कीजिए।
7. ''मूल अधिकार व मूल कर्त्तव्य एक दूसरे के पूरक हैं।'' स्पष्ट कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय संविधान में नागरिकों को दिये गये मूल अधिकारों का उल्लेख करते हुए किन्हीं दो मूल अधिकारों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. मूल अधिकार से क्या अभिप्राय है? इसका महत्त्व स्पष्ट करते हुए समानता के मूल अधिकार का वर्णन कीजिए।
3. राज्य के नीति निदेशक तत्वों की व्याख्या कीजिये तथा निदेशक तत्व व मौलिक अधिकारों में अन्तर स्थापित कीजिए।
4. नीति निर्देशक तत्वों की सफल क्रियान्वति हेतु भारत सरकार द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
5. भारतीय संविधान द्वारा प्रदान किये गये स्वतन्त्रता के अधिकार का वर्णन कीजिए और बताइए कि क्या स्वतंत्रता पर लगाये प्रतिबन्धों और निवारक नजरबन्दी कानून की व्यवस्था से स्वतन्त्रता का अधिकार समाप्त हो गया है?
6. भारतीय संविधान में दिये गये मूल कर्त्तव्यों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

बहुचयनात्मक प्रश्नों की उत्तरमाला

1. अ	2. ब	3. स	4. द
5. ब	6. ब	7. ब	8. अ

3. भारत की संघीय व्यवस्था के आधारभूत तत्व
(Main Elements of Indian Federal System)

सत्ता की शक्तियों के वितरण तथा स्तरों के आधार पर अपनायी जानी वाली शासन प्रणाली ही संघवाद है। इस प्रणाली के अंतर्गत शासन का संचालन केन्द्र तथा उसकी विभिन्न इकाईयों के माध्यम से होता है। संघीय शासन का निर्माण भी प्रायः दो प्रकार से होता है। प्रथम पूर्व में अनेक संप्रभु इकाईयों का आपस में एक हो जाना और द्वितीय, एक बड़ी राजनीतिक इकाई को शासन की कार्यकुशलता की दृष्टि से अलग अलग इकाईयों में विभाजित कर देना। पहली प्रक्रिया का सबसे प्रमुख उदाहरण अमेरिका है जबकि दूसरे का भारत। वर्तमान में अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, स्विट्जरलैण्ड, रुस, कनाडा तथा भारत जैसे देश सफल संघीय देश माने जाते हैं।

भारत में संविधान के तहत संघीय शासन की स्थापना की गयी है। यद्यपि 'संघवाद' के स्थान पर "राज्यों का संघ" शब्द का प्रयोग किया गया है। संविधान लागू होने पर भारत में एक केन्द्रीय सत्ता और 14 राज्यों/प्रान्तों की सत्ता स्थापित कर संघीय ढाँचे को मूर्त रूप दिया गया।

वर्तमान में भारत में 29 राज्य और 7 केन्द्र शासित प्रदेश हैं।

3.1 भारतीय संघीय व्यवस्था के प्रमुख तत्व (Main Elements of Indian Federal System) –

1. **शासन शक्तियों का स्पष्ट विभाजन** – संविधान की सातवीं अनुसूची के अन्तर्गत अनुच्छेद 246 केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन सूची पद्धति के माध्यम से किया गया है। संघीय सूची के 97 विषयों पर केन्द्र को विधि निर्माण का अधिकार है। राज्य सूची के 66 विषयों पर राज्यों को विधि निर्माण का अधिकार है जबकि समवर्ती सूची के 47 विषयों पर केन्द्र तथा राज्य दोनों कानून बना सकते हैं। परन्तु केन्द्र और राज्यों के बीच संघर्ष की स्थिति में केन्द्रीय कानून ही अन्तिम रूप से मान्य होगा। इसके अतिरिक्त समस्त अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र को प्रदान की गई है। केन्द्र की इस मजबूत स्थिति के कारण ही विशेषज्ञ भारत को केन्द्रीय वर्चस्व वाला संघवाद मानते हैं।
2. **निष्पक्ष व स्वतंत्र न्यायपालिका** – किसी भी संघीय व्यवस्था के लिए एक स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायपालिका का होना अत्यावश्यक है। इसी से ' विधि का शासन ' स्थापित होता है और केन्द्र तथा राज्यों के बीच विवादों का संविधान के प्रावधानों के अनुरूप समाधान किया जा सकता है। ऐसे अनेक अवसर भारत में आए जब न्यायपालिका ने राज्यों के बीच तथा केन्द्र और राज्यों के बीच संवैधानिक स्थिति को स्पष्ट कर संघीय ढाँचे की रक्षा की है। सभी राज्यों के शीर्ष पर सर्वोच्च न्यायालय को पदस्थ किया गया है।
3. **संविधान की सर्वोच्चता** – भारतीय संघवाद के अन्तर्गत संविधान की सर्वोच्चता को स्थापित किया गया है। केन्द्र तथा राज्य दोनों ही संविधान से ही अपनी शक्ति प्राप्त करते हैं। अमेरिकी संघवाद के विपरीत भारतीय विविधता के कारण ही सम्पूर्ण देश के लिए केवल एक ही संविधान की व्यवस्था की गई है। इकाईयों को अलग से संविधान (जम्मू कश्मीर राज्य को छोड़कर कर) बनाने का अधिकार प्राप्त नहीं है।
4. **एकल नागरिकता** – पारम्परिक संघीय व्यवस्थाओं के विपरीत भारतीय संघवाद में सम्पूर्ण देश के लिए एकल नागरिकता का ही प्रावधान है। ऐसा भारत की विशाल–बहुलता के कारण भावी विखण्डनकारी संभावना को रोकने के लिए किया गया था।
5. **केन्द्रीय व्यवस्थापिका में राज्यों का सदन–राज्यसभा** – भारतीय संघवाद को सुदृढ़ करने के लिए ही केन्द्रीय व्यवस्थापिका अर्थात् संसद के उच्च सदन राज्यसभा को राज्य की प्रतिनिध्यात्मक संस्था के रूप में स्थापित किया गया है। यद्यपि अमेरिकी संघीय व्यवस्था के विपरीत राज्य सभा में राज्यों को एक समान प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं किया गया है, वरन् जनसंख्या के अनुपात में सदस्य संख्या निर्धारित की गई है।
6. **राज्यपाल का पद** – राज्यपाल भारतीय संघीय व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। राज्यपाल केन्द्र द्वारा नियुक्त होकर राज्य में केन्द्र के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। यद्यपि व्यावहारिक अनुभव के आधार पर राज्यपाल का पद केन्द्र और राज्यों के मध्य विवाद का सबसे बड़ा मुद्दा बन गया है। परन्तु केन्द्र राज्य संघर्ष के रूप में उसकी अपनी उपयोगिता है।
7. **एकात्मकता का प्रभुत्व** – भारतीय संघीय व्यवस्था मूल रूप से केन्द्रीकृत अर्थात् एकात्मक प्रभुत्व वाली व्यवस्था ही मानी जा सकती है। भारत की एकता और अखण्डता को सुरक्षित रखने के लिए केन्द्र को मजबूत बनाना स्वाभाविक ही था। यद्यपि कुछ वामपंथ समर्थक राजनैतिक दल तथा विघटनकारी विचारधाऐं इस एकात्मक प्रवृति का विरोध करती हैं। यथार्थ में संविधान में अनेक प्रावधानों के माध्यम से केन्द्र को निर्णायक

भूमिका प्राप्त है। संविधान संशोधन, राज्यों के निर्माण –पुनर्सीमांकन, आपातकालीन परिस्थितियों, आर्थिक अधिकारों आदि संदर्भों में केन्द्र की स्थिति अत्यन्त मजबूत और निर्णायक रखी गई है। विभिन्न उदाहरण भी यह स्पष्ट करते हैं कि सशक्त केन्द्र वाले भारतीय संघवाद ने वस्तुतः भारत की एकता व अखण्डता को कायम रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

3.2 एकात्मक लक्षण (Unitary Features) –

संघात्मक व्यवस्था के होते हुए भी भारतीय संविधान को पूर्ण संघीय नहीं माना गया है क्योंकि भारतीय संविधान में कुछ ऐसे प्रावधान है जो एकात्मक होने के साक्षात् प्रमाण है। वे विशेषताएँ जो भारतीय संविधान को एकात्मक रूप देती है, वे निम्नलिखित है–

1. **एक संविधान**– भारत में केन्द्र तथा राज्यों के लिए एक ही संविधान है, अपवाद जम्मू–कश्मीर राज्य है। अमेरीका तथा स्विट्जरलैण्ड आदि देशों में संघात्मक प्रणाली है तथा वहाँ राज्यों के अपने पृथक् संविधान हैं, जबकि भारत में समस्त देश के लिए एक ही संविधान हैं, जिसमें केन्द्र तथा राज्यों के शासन की व्यवस्था के सम्बन्ध में प्रावधान है।
2. **अवशिष्ट शक्ति** – भारतीय संविधान ने अनुच्छेद 248 के अनुसार अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र सरकार को प्रदान की है। अवशिष्ट शक्ति का अर्थ किसी ऐसे विषय से है जो तीनों में से किसी भी सूची में अंकित नहीं हैं। यह व्यवस्था कनाडा के संविधान में उपलब्ध है।
3. **संविधान संशोधन** – संविधान के संशोधन करने के सम्बन्ध में केन्द्र को राज्यों की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त है। संविधान के अधिकांश भाग को संसद साधारण बहुमत से निश्चित विधि द्वारा परिवर्तित कर सकती है। संविधान का बहुत कम भाग ऐसा है जिसमें संशोधन के लिए कम से कम आधे राज्यों के विधानमंडलों का समर्थन आवश्यक है। अतः संविधान संशोधन में भी केन्द्र सरकार की श्रेष्ठता है जो कि एकात्मक प्रणाली का मुख्य लक्षण है।
4. **शक्तियाँ का विभाजन** – संविधान में शक्तियों का विभाजन केन्द्र के पक्ष में है। संघ सूची में राज्य सूची की अपेक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण विषय अंकित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त संघ सूची के विषयों की कुल संख्या 97 है। जब कि राज्य सूची में कम महत्त्व वाले 66 विषय अंकित किए गए है। इसके अतिरिक्त समवर्ती सूची में कुल 47 विषय अंकित है। संघ सूची में अंकित विषयों पर केन्द्र अथवा संसद कानून बनाती है। राज्य सूची में अंकित विषयों पर राज्य विधानमंडल कानून बनाता है। किन्तु कुछ विशेष अवस्थाओं में संसद भी राज्य सूची में अंकित विषयों पर कानून बना सकती है। समवर्ती सूची में अंकित विषयों पर दोनों यानी केन्द्र तथा राज्य सरकारें कानून बना सकती है। परन्तु यदि राज्य सरकार द्वारा निर्मित कानून केन्द्रीय कानून का विरोध करता है तो राज्य सरकार द्वारा निर्मित कानून उस सीमा तक रद्द कर दिया जाता है जिस सीमा तक वह केन्द्र सरकार के कानून का विरोध करता है और तब केन्द्र का कानून लागू कर दिया जाता है। अतः शक्तियों का यह विभाजन केन्द्र को शक्तिशाली बनाता है जो कि एकात्मक सरकार का मुख्य लक्षण है।
5. **आपात शक्ति** – प्रायः संघात्मक संविधान को एकात्मक रूप देने के लिए संशोधन करना आवश्यक होता है। परन्तु भारतीय संविधान की विशेषता है कि संशोधन किए बिना इसको एकात्मक रूप दिया जा सकता है। संविधान के अनुच्छेद 352, 356 तथा 360 के अनुसार राष्ट्रपति आपात स्थिति की घोषणा कर सकता है। अनुच्छेद 352 के अनुसार यदि राष्ट्रपति को विश्वास हो जाए कि युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह के कारण भारत की सुरक्षा खतरे में है तो समस्त देश में या देश के किसी एक भाग में वह आपात स्थिति की घोषणा कर सकता है। अनुच्छेद 356 के अनुसार यदि राष्ट्रपति को राज्य के राज्यापाल या किसी अन्य साधन द्वारा सूचना मिलने पर विश्वास हो जाए कि उस राज्य में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसमें राज्य का शासन संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता है तो राष्ट्रपति आपातकाल की घोषणा कर सकता है। अनुच्छेद 360 के अनुसार यदि राष्ट्रपति को विश्वास हो जाए की ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसके कारण भारत या इसके किसी भाग की वित्तीय स्थिरता संकट में है तो वह उस समय वित्तीय संकट की घोषणा कर सकता है।
6. **राज्यसभा में राज्यों का असमान प्रतिनिधित्व** – संघीय प्रणाली में दूसरा सदन प्रायः समानता के आधार पर राज्यों का प्रतिनिधित्व करता है। जिस प्रकार अमेरीका के द्वितीय सदन सीनेट में प्रत्येक राज्य दो–दो प्रतिनिधि भेजता है परन्तु भारत की राज्यसभा में राज्यों का प्रतिनिधित्व समानता के आधार पर नहीं बल्कि जनसंख्या के आधार पर दिया गया है जो संघात्मक प्रणाली के सिद्धान्तों के विरुद्ध है।
7. **एकल नागरिकता** – अमेरीका तथा स्विट्जरलैण्ड के संविधानों में दोहरी नागरिकता की प्रथा है। प्रत्येक व्यक्ति संघ का नागरिक होने के साथ–साथ अपने राज्य का भी नागरिक होता है। उस राज्य की ओर से उसको कुछ विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं। भारतीय संविधान में दोहरी नागरिकता की प्रथा नहीं है। अपितु सभी व्यक्ति भारत के ही नागरिक है तथा सभी को समानता के आधार पर संविधान की ओर से अधिकार प्राप्त है।
8. **प्रारम्भिक बातों में एकरूपता** – कुछ प्रारम्भिक बातों की एकरूपता भारतीय संविधान की मुख्य विशेषता है जैसे – समस्त देश के लिए एक ही प्रकार के दीवानी तथा फौजदारी कानून का प्रबन्ध किया गया है। समस्त

देश के लिए एक ही चुनाव आयोग है। अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्य केन्द्र तथा राज्यों में शासन का प्रबन्ध करते हैं। जबकि इन सेवाओं के अधिकारियों की नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है। परन्तु वे राज्य सरकारों के उच्च पदों पर कार्य करते हैं। इन बातों से संविधान का एकात्मकता की ओर झुकाव प्रतीत होता है।

9. **एकल संगठित न्याय व्यवस्था** – अमेरीका तथा आस्ट्रेलिया में राज्यों की न्याय प्रणाली केन्द्रीय न्याय प्रणाली से पृथक् है। परन्तु भारत में प्रत्येक न्यायालय सर्वोच्च न्यायालय के अधीन कार्य करता है। राज्यों के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है। इसी प्रकार राज्यों के छोटे न्यायालय के अधीन होते हैं। इन छोटे न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है। अतः एकल संगठित उच्चन्यायालय प्रणाली संघात्मक राज्य का नहीं बल्कि एकात्मक राज्य का लक्षण माना जाता है।

10. **राज्यों को पृथक् होने का अधिकार नहीं** – भारत संघ के राज्यों को संघ से पृथक् होने का अधिकार नहीं है। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि 1963 में संविधान के 16वें संशोधन द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि संघ से पृथक् होने के पक्षपोषण को वाक् स्वातंत्रय संरक्षण प्राप्त नहीं होगा।

11. **सीमाओं में परिवर्तन हेतु राज्यों की सहमति अनिवार्य नहीं** – अमेरीकी संविधान के विपरीत भारतीय संविधान के अनुसार संघीय संसद राज्यों की सहमति के बिना भी राज्यों का पुनर्गठन अथवा उनकी सीमाओं में परिवर्तन कर सकती है। ऐसा विधान की सामान्य प्रक्रिया के अनुसार साधारण बहुमत से किया जा सकता है। अनुच्छेद 7 के अनुसार इसके लिए संसद को प्रभावित राज्य के विधानमण्डल की सहमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। केवल संसद को सिफारिश करने के प्रयोजन हेतु राष्ट्रपति के लिए यह आवश्यक है कि वे प्रभावित राज्य के विधानमण्डल के विचार ज्ञात कर लें। यह बाध्यता भी पूर्णतः आज्ञापरक नहीं है। प्रभावित राज्य द्वारा अपने विचार अभिव्यक्त करने हेतु राष्ट्रपति द्वारा समय सीमा का निर्धारण किया जा सकता है। इस प्रकार भारत संघ में राज्य उस प्रकार अविनाशी नहीं हैं, जिस प्रकार अमेरीका में हैं।

12. **लोक सेवाओं का विभाजन नहीं** – अमेरीका में संघ एव राज्य दोनों के अपने–अपने प्रशासनिक पदाधिकारी होते हैं, जो उनकी स्वयं की विधियों एवं कृत्यों का प्रशासन करते हैं किन्तु भारत में लोक सेवकों के मध्य इस प्रकार का विभाजन नहीं है। अधिकांश लोक सेवकों का नियोजन राज्यो द्वारा किया जाता है। किन्तु वे अपने–अपने राज्यों पर लागू होने वाली संघ एव राज्य दोनों द्वारा निर्मित विधियों के प्रशासन करते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 312 के अन्तर्गत अखिल भारतीय सेवाओं के सृजन से सम्बन्धित प्रावधान किए गए है। किन्तु ये सेवाएँ संघ एवं राज्य दोनों के लिए सामान्य है। संघ द्वारा नियुक्त भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्य या तो संघ के किसी विभाग (जैसे –गृह अथवा प्रतिरक्षा) के अधीन नियोजित किए जा सकते हैं अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन। लोक सेवकों की सेवाएँ अन्तरणीय होती है। संघ के अधीन नियोजित किए जाने पर भी वे प्रश्नगत विषय पर लागू होने वाली संघ एवं राज्य दोनों द्वारा निर्मित विधियों का प्रशासन करते हैं। राज्यों के अधीन सेवा करते हुए भी अखिल भारतीय सेवा के सदस्य को केवल संघीय सरकार द्वारा ही पद से हटाया जा सकता है। राज्य सरकार इस प्रयोजनार्थ अनुषंगी कार्यवाही शुरु करने हेतु सक्षम है।

3.3 भारतीय संघवाद की प्रवृत्तियाँ (Tendencies of Indian Federalism) –

भारतीय संघवाद, संविधानविद् के.सी.व्हीयर के शब्दों में 'अर्द्धसंघीय' है। ग्रेनविले ऑस्टिन ने इसे सहयोगी संघवाद कहा है। स्वयं डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने इसे कठोर संघीय ढाँचा मानने से इन्कार किया है। मोरिस जोन्स ने इसे सौदेबाजी वाला संघवाद माना है। परन्तु यह सत्य है कि भारतीय संघवाद विशुद्ध सैद्धान्तिक संघवाद नहीं है और विशिष्ट बहुलवादी परिस्थितियों में इसे एकात्मक शक्ति प्रदान की गई है। केन्द्र को अत्यधिक शक्तिशाली बनाया गया है। विधायी कार्यकारी और न्यायिक – आपातकालीन सभी क्षेत्रों में अन्तिम व निर्णायक भूमिका केन्द्र की ही रखी गई है। अखिल भारतीय सेवाएँ आपातकालीन उपबंध (धारा 352, 356, 360) वित्त आयोग इत्यादि संस्थागत रूप से केन्द्रीकरण के माध्यम रहे है।

इस एकात्मक आत्मा वाले संघवाद का दूसरा पहलू यह भी है कि राज्यों को अनेक संस्थाओं के माध्यम से उचित महत्त्व और भागीदारी प्रदान की गई है। राष्ट्रीय विकास परिषद्, अन्तर्राज्यीय परिषद् (अनुच्छेद 263) क्षेत्रीय परिषदे नीति आयोग इत्यादि महत्त्वपूर्ण संस्थाओं से संघवादी स्वरूप में राज्य की भागीदारी को सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- शासन की शक्तियों का केन्द्र व राज्यों में विभाजन संघवाद की प्रवृत्ति है।
- भारतीय संघ को अर्द्धसंघात्मक व सहयोगी संघवाद के नाम से भी जाना जाता है।
- भारत में वर्तमान में 29 राज्य व 7 केन्द्र शासित प्रदेश है।
- भारत में संविधान की सर्वोच्चता को महत्त्व दिया गया है।
- संघ व राज्यों के आपसी सम्बन्धों के अध्ययन हेतु सरकारिया आयोग गठित किया गया।
- संविधान के अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत राज्यों में केन्द्र द्वारा राष्ट्रपति शासन लागू किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. वर्तमान में हमारे देश में कितने राज्य है –
   (अ) 29 (ब) 30
   (स) 35 (द) 14 ( )
2. संघ सूची के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार है–
   (अ) राज्य सरकार (ब) केन्द्र सरकार
   (स) पंचायत को (द) उच्च न्यायालय ( )
3. संविधान का कौनसा उपबन्ध आपातकाल की व्यवस्था देता है–
   (अ) 263 (ब) 310
   (स) 356 (द) 74 ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राज्य सूची में कितने विषय है?
2. संसद में राज्यों का प्रतिनिधित्व कौनसा सदन करता है?
3. केन्द्र व राज्यों के मध्य विवादों का निपटारा कौनसी संस्था करती है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. एकल नागरिकता क्या है ?
2. ''विधि के शासन'' से आप क्या समझते हैं ?
3. सरकारिया आयोग का सम्बन्ध किससे था ?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय संघीय व्यवस्था की विशेषताओं पर व्याख्यात्मक लेख लिखिए।
2. भारत के संघवाद की नवीन प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।

बहुचयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. अ 2. ब 3. स